प्रकाशक
वृहस्पति उपाध्याय
हिन्दी प्रकाशन मंदिर
इलाहाबाद

पहली बार : १६५४
मूल्य
सवा रुपया

मुद्रक
विश्व भारती प्रेस,
नई दिल्ली

नाटक एवं पीड़ामय वातावरण से बहुत दूर हूँ; (किन्तु) इसके लिए मैं किंचित्मात्र भी गर्व नहीं कर सकता, अपने इन आँसुओं तक के लिए भी नहीं!

आह! एक देश-निर्वासित पुत्र भूख से तड़पते हुए अपने देशवासियों के लिए कर ही क्या सकता है? और खोये हुए कवि का विलाप भी उनके किस काम का?

काश! मैं अपने देश की पृथ्वी पर उगी हुई गेहूँ का एक बाल होता, जिसे (कोई) भूखा बच्चा काटकर उसके सार द्वारा अपनी आत्मा पर से मृत्यु के बाहुपाश को हटा सकता!

यदि मैं अपने देश के बगीचे में एक पका हुआ फल होता, तो (कोई) भूखी महिला मुझे तोड़कर खाती और जीवन प्राप्त करती!

और अगर मैं अपने देश के आकाश पर उड़ता हुआ एक पक्षी होता, तो मेरा (कोई) भूखा भाई मेरा शिकार करता और मेरे शरीर के मांस द्वारा अपने शरीर पर से कब्र के साये को हटा देता।

किन्तु आह! मैं न तो सीरिया के मैदानों में उगी हुई गेहूं का बाल हूँ, और न लेबनान की घाटियों में पका हुआ (कोई) फल ही। यही (तो) मेरा दुर्भाग्य है, और यह मेरा मूक रुदन है, जो रात्रि के प्रेतों के सम्मुख एवं मेरी आत्म के सम्मुख (मेरी) दयनीय स्थिति को प्रकट करता है। र एक दर्दनाक दुखान्त कहानी है, जो मेरी जिह्वा को बाँधे हुए

प्रकाशकीय

हिन्दी में खलील जिब्रान की कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। हमारे यहाँ से ही उनकी 'पागल', 'बटोही' और 'शैतान' निकल चुकी है। हमें यह देखकर हर्ष होता है कि इस महान् कलाकार की रचनाओं के लिए हिन्दी के पाठकों की रुचि दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। सच यह है कि जिब्रान का साहित्य देश-काल की सीमाओं का बंधन स्वीकार नहीं करता और वह सर्वदेशीय तथा सर्वकालीन महत्त्व का है। जो भी और जब भी उसे पढ़ेगा, उसमें नवीनता, भावनाशीलता तथा गहरे विचारों का दर्शन करेगा।

हमें प्रसन्नता है कि इस पुस्तक द्वारा हम जिब्रान की चुनी हुई कथाओं का हिन्दी-रूपान्तर प्रस्तुत कर रहे हैं। आशा है, यह नवीन कृति पाठकों की भावनाओं को स्पर्श करेगी और वे इसके प्रसार में यथासाध्य अपना योग देंगे।

भूमिका

महाकवि खलील जिब्रान अब हिन्दी-प्रेमियां के लिए कोई नये नही है। उनकी अनेक पुस्तको के अनुवाद से आज हिन्दी-भाषा सुशोभित है और उनके साहित्य में हिन्दी के पाठकों को एक ऐसा स्वाद मिला है, जो पहले कभी नही मिला था। इसलिए उनकी एक पुस्तक 'शैतान' को, जो कि प्रकाशित हो चुकी है, पूरा कर लेने के वाद इस दूसरी पुस्तक 'तूफान' के अनुवाद का मैंने बीडा उठाया। प्रस्तुत पुस्तक 'तूफान' भी 'शैतान' की भाँति ही जिब्रान की कुछ चुनी हुई भाव-कथाओं का संग्रह है।

वही 'रहस्यमय पूर्व' इस पुस्तक के हृदय मे भी व्याप्त है जिसके लिए जिब्रान प्रसिद्ध है। आरम्भ से ही पाठक उनकी कौधती हुई सादगी, भीपरा चुम्वक-शक्ति तथा अनन्त विचारों को अनुभव करने लगता है। जिब्रान के पुरातन विचार आज के मनुष्य की समस्याओ का हल प्रस्तुत करते है, और उनकी काव्यमय शैली आज की काव्य-पद्धति से भी कही आगे है। उनकी शैली एक साथ ही प्रवल किन्तु कोमल, भयानक किन्तु मधुर, आँसुओं में भीगे किन्तु आनंददायक और सादे किन्तु तूफानी, सभी तरह के भाव प्रकट करने में सफल है। कितने भी गूढ और उलझे हुए विचार इस सादगी के कारीगर के लिए कठिन नही है। रहस्यमय विचारों को अपनी सादगी की शैली में सजाकर जिब्रान पढनेवाले को कभी हास्य तो कभी रुदन और कभी आनन्द तो कभी अनंत पीड़ा के झूले में झुलाते रहते है। उनके गहन विचार इन्ही सीधे-सादे शब्दो की पोशाक पहन कर सीधे मनुष्य के हृदय में उतर जाते है और शीघ्र ही उसकी समस्त शक्तियो पर अधिकार जमा लेते है।

उनके साहित्य को पढते समय पाठक रहस्यों की दुनिया में खोया रहता है, किन्तु ऐसे रहस्य, जो कि मनुष्य को वास्तविकता की ओर ले जाते है और उसे ईश्वरीय अमर विधान के अनुकूल चलने को वाध्य करते हैं। कभी-कभी जिब्रान इस संसार से दूर पहुँच जाते हैं और वहाँ हमारी इस दुनिया पर आँसू बहाते रहते हैं। तब वे अपने को इस संसार में एक अजनबी अनुभव करते हैं। समाज की कुरीतियों तथा धार्मिक अध-विश्वासो के विरुद्ध उनका अनवरत युद्ध रहा और इसीलिए उन्हे देश-निकाला दिया गया, किन्तु देश से वाहर रहकर भी उनके देश-प्रेम का अन्त नही था। 'सीरिया का अकाल' मे जब वह लिखते है, "आह, एक देश-वहिष्कृत पुत्र अपने भूख से तड़पते हुए देशवासियो के लिए कर क्या सकता है? एक खोए हुए कवि के विचार ही उनके किस काम के है?"—तो अनुभव होता है कि कवि को अपने देश से दूर रहने का कितना दु.ख है और अपने देशवासियों से कितना प्रेम!

वास्तव में जिब्रान की यह खूबी थी कि कम-से-कम शब्दो में वे अपनें अनंत विचारो को जमा कर देते थे। उनके तीखे किन्तु सच्चे विचारो ने संसार की अनगिनत भाषाओ में उनके लिए स्थान बना दिया। किन्तु आनन्द की वात तो यह है कि उनका यह तीखापन उनकी कविता के मधुर संगीत पर तनिक भी आँच नही आने देता और न ही उसकी कोमलता को छूता है।

ये भाव-कथाएँ आत्म-कहानी की भाँति जान पड़ती है। इसीलिए जिब्रान को प्राय 'अमर-दूत' के नाम से पुकारा जाता है। उसकी भविष्य-वाणी हमें सूचित करती है कि संसार में अभी कितने ही भयानक युद्ध और होनें है। उनके सामाजिक आरोप एवं आलोचनाएँ केवल विरोध भर नही है, अपितु रचनात्मक विचार है और जीवन को प्रकृति की ओर ले जाते हैं।

उनकी अपूर्व वर्णनात्मक शक्ति को कोई नही पा सकता। जिब्रान गद्य और पद्य दोनो में ही अतुलनीय है।

दया, बन्धुत्व एव प्रेम पर ही जिब्रान का मौलिक वाद खडा है। इसमें आश्चर्य नही कि आज का ससार अपनी अनंत कठिनाइयो में भी जिब्रान के महान् विचारो की परवा नही करता, किन्तु उनके विचार तो किसी एक समय के लिए नही है। लोग देखेगे कि यथार्थ में जिब्रान सदियो जियेगा और उत्तरोत्तर लोकप्रिय बनेगा।

मृत्यु के लिए उनके सहानुभूतिपूर्ण विचारो से ज्ञात होता है कि लिखने वाला कोई बूढा है, किन्तु इन भाव-कथाओं को लिखते समय जिब्रान एक युवा थे। उनका आँसुओ से प्रेम (आँसू जोकि उनके शब्दों में आत्मा को साफ-सुथरा बना देते है) और पीड़ित साथियो के लिए अनुराग उनके दर्शनात्मक विचारो की कड़ियाँ है, जिन्हे उन्होंने बडे यत्न से एक-दूसरे में पिरो दिया है।

मुझे विश्वास है कि मनुष्य एक-न-एक दिन जिब्रान के सच्चे विचारों को अवश्य अपनायेगा और "उस दिन" जिब्रान लिखते है, "संसार जिंदगी की मुसीबतो और हृदय की चीख-पुकारो से नही, अपितु जीवन के आँसुओ तथा हास्य के सगीत से परिपूर्ण होगा।" किन्तु उनका कहना है कि यह तभी हो सकेगा जब कि मनुष्य प्रेम के मूल्य, आँसुओ के आनंद तथा मृत्यु के संगीत को पहचान लेगा।

महाकवि खलील जिब्रान बीसवी सदी के एक महान् विचारक, लेखक एव चित्रकार थे। प्रसिद्ध आयरिश कवि जार्ज रसेल ने जिब्रान की तुलना भारत के विश्व-कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर से की है। वास्तव में इन दोनो में गजब का सादृश्य है। रवीन्द्र की भाँति जिब्रान के लिए भी कविता एक ईश्वरीय वरदान थी।

इस प्रकार के साहित्य का अनुवाद करना कठिन कार्य है। फिर भी मै कथाओ के भावार्थ एवं शब्दार्थ दोनो की एकरूपता को लेकर चला

हूँ और मूल की सुन्दरता को बनाए रखने का मैंने भरसक प्रयत्न किया है। जिब्रान के साहित्य के अनुवाद का यह मेरा प्रथम प्रयास नहीं है। इसलिए काफी आत्म-विश्वास के साथ इस ओर अग्रसर हुआ हूँ। कितना सफल हो पाया हूँ, इसका निर्णय तो पाठक स्वयं कर सकेंगे।

इस पुस्तक के अनुवाद में मुझे श्री घनेश मल्लिक से काफी सहायता मिली है। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ।

गाजियाबाद, —नरेन्द्र चौधरी

३० अक्तूबर, १९५४

अनुक्रम

तू फा न

: १ :

तूफान

यूसुफ-अल-फाखरी की आयु तब तीस वर्ष की थी, जब उन्होंने संसार को त्याग दिया और उत्तरी लेबनान में वह कदेसा की घाटी के समीप एक एकांत आश्रम में रहने लगे। आसपास के देहातों में यूसुफ के बारे में तरह-तरह की किम्वदन्तियाँ सुनने में आती थीं। कइयों का कहना था कि वे एक धनी-मानी परिवार के थे और किसी स्त्री से प्रेम करने लगे थे, जिसने उनके साथ विश्वासघात किया। अतः (जीवन से) निराश हो उन्होंने एकान्त-वास ग्रहण कर लिया। कुछ लोगों का कहना था कि वे एक कवि थे और कोलाहलपूर्ण नगर को त्यागकर वे इस आश्रम में इसलिए रहने लगे कि यहाँ (एकान्त में) अपने विचारों को संकलित कर सकें, और अपनी ईश्वरीय प्रेरणाओं को छन्दोबद्ध कर सकें। परन्तु कइयों का यह विश्वास था कि वे एक रहस्यमय व्यक्ति थे और उन्हें अध्यात्म में ही संतोष मिलता था; यद्यपि अधिकांश लोगों का यह मत था कि वे पागल थे।

जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, इस मनुष्य के बारे में मैं किसी निश्चय पर न पहुँच पाया, क्योंकि मैं जानता था कि उसके हृदय में कोई गहरा रहस्य छिपा है, जिसका ज्ञान कल्पना-मात्र से

1512

प्राप्त नहीं किया जा सकता। एक अरसे से मैं इस अनोखे मनुष्य से भेंट करने की सोच रहा था। मैंने अनेक प्रकार से इनसे मित्रता स्थापित करने का प्रयास किया; इसलिए कि मैं इनकी वास्तविकता को जान सकूँ और यह पूछकर कि इनके जीवन का क्या ध्येय है, इनकी कहानी को जान लूँ। किन्तु मेरे सभी प्रयास विफल रहे। जब मैं प्रथम बार उनसे मिलने गया तो वे लेबनान के पवित्र देवदारों के जंगल में घूम रहे थे। मैंने उन्हें चुने हुए शब्दों की सुन्दरतम भाषा में अभिवादन किया, किन्तु उन्होंने उत्तर में जरा-सा सिर झुकाया और लम्बे डग भरते हुए आगे निकल गये।

दूसरी बार मैंने उन्हें आश्रम के एक छोटे-से अंगूरों के बगीचे के बीच खड़े देखा। मैं फिर उनके निकट गया और इस प्रकार कहते हुए उनका अभिनंदन किया, "देहात के लोग कहा करते हैं कि इस आश्रम का निर्माण चौदहवीं शताब्दी में सीरिया-निवासियों के एक सम्प्रदाय ने किया था। क्या आप इसके इतिहास के बारे में कुछ जानते हैं?"

उन्होंने उदासीन भाव से उत्तर दिया, "मैं नहीं जानता कि उस आश्रम को किसने बनवाया और न ही मुझे यह जानने की परवाह है।" उन्होंने मेरी ओर से पीठ फेर ली और बोले, "तुम अपने बाप-दादों से क्यों नहीं पूछते, जो मुझसे अधिक बूढ़े हैं और जो इन घाटियों के इतिहास से मुझसे कहीं अधिक परिचित हैं?"

अपने प्रयास को बिलकुल ही व्यर्थ समझ मैं लौट आया।

इस प्रकार दो वर्ष व्यतीत हो गये। उस निराले मनुष्य की झक्की जिन्दगी ने मेरे मस्तिष्क में घर कर लिया और वह बार-बार मेरे सपनों में आ-आ कर मुझे तंग करने लगी।

× × ×

शरद् ऋतु में एक दिन, जब मैं यूसुफ-अल-फाखरी के आश्रम के पास की पहाड़ियों एवं घाटियों में घूमता फिर रहा था, अचानक एक प्रचण्ड आँधी और मूसलाधार वर्षा ने मुझे घेर लिया और तूफान मुझे एक ऐसी नाव की भाँति इधर-से-उधर भटकाने लगा, जिसकी पतवार टूट गई हो और जिसका मस्तूल सागर के तूफानी झकोरों से छिन्न-भिन्न हो गया हो। बड़ी कठिनाई से मैंने अपने पैरों को यूसुफ साहब के आश्रम की ओर बढ़ाया और मन-ही-मन सोचने लगा, "बड़े दिनों की प्रतीक्षा के बाद यह एक अवसर हाथ लगा है। मेरे वहाँ घुसने के लिए तूफान एक बहाना बन जायगा और अपने भीगे हुए वस्त्रों के कारण मैं वहाँ काफी समय तक टिक सकूँगा।"

जब मैं आश्रम में पहुँचा तो मेरी स्थिति अत्यन्त ही दयनीय हो गई थी। मैंने आश्रम के द्वार को खटखटाया तो जिनकी खोज में मैं था उन्होंने ही द्वार खोला। अपने एक हाथ में वह एक ऐसे मरणासन्न पक्षी को लिये हुए थे, जिसके सिर में चोट

आई थी और पंख कट गये थे। मैंने यह कहकर उनकी अभ्यर्थना की, "कृपया मेरे इस बिना आज्ञा के प्रवेश एवं कष्ट के लिए क्षमा करें। अपने घर से बहुत दूर इस बढ़ते हुए तूफान में मैं बुरी तरह फँस गया था।"

त्यौरी चढ़ाकर उन्होंने कहा, "इस निर्जन वन में अनेक गुफाएँ हैं, जहाँ तुम शरण ले सकते थे।" किन्तु जो भी हो उन्होंने द्वार बन्द नहीं किया। मेरे हृदय की धड़कन पहले से ही बढ़ने लगी; क्योंकि शीघ्र ही मेरी सबसे बड़ी तमन्ना पूर्ण होने जा रही थी। उन्होंने पक्षी के सिर को अत्यन्त ही सावधानी से सहलाना शुरू किया और इस प्रकार अपने एक ऐसे गुण को प्रकट करने लगे जो मुझे अति प्रिय था। मुझे इस मनुष्य के दो प्रकार के परस्पर-विरोधी गुण—दया और निष्ठुरता को एक साथ देखकर आश्चर्य हो रहा था। हमें ज्ञात हुआ कि हम गहरी निस्तब्धता के बीच खड़े हैं। उन्हें मेरी उपस्थिति पर क्रोध आ रहा था और मैं वहाँ ठहरे रहना चाहता था।

ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने मेरे विचारों को भाँप लिया, क्योंकि उन्होंने ऊपर (आकाश) की ओर देखा और कहा, "तूफान साफ है और खट्टा (बुरे मनुष्य का) मांस खाना नहीं चाहता। तुम इससे बचना क्यों चाहते हो?"

कुछ व्यंग से मैंने कहा, "हो सकता है, तूफान खट्टी और नमकीन वस्तुएँ न खाना चाहता हो, किन्तु प्रत्येक पदार्थ को वह ठण्डा एवं शक्तिहीन बना देने पर तुला है और निस्सदेह यह

वह मुझे फिर से पकड़ लेगा तो अपने में समाये बिना न छोड़ेगा।"

उनके चहरे का भाव यह कहते-कहते अत्यन्त कठोर हो गया, "यदि तूफान ने तुम्हें निगल लिया होता तो तुम्हारा बड़ा सम्मान किया होता, जिसके तुम योग्य भी नहीं हो।"

मैंने स्वीकारते हुए कहा, "हाँ श्रीमन्! मैं इसीलिए तूफान से छिप गया कि कहीं ऐसा सम्मान न पा जाऊँ जिसके कि मैं योग्य ही नहीं हूँ।"

इस चेष्टा में कि वे अपने चहरे पर की मुस्कान (मुझसे) छिपा सकें, उन्होंने अपना मुँह फेर लिया। तब वे अँगीठी के पास रखी हुई एक लकड़ी की बैंच की ओर बढ़े और मुझसे कहा कि मैं विश्राम करूँ और अपने वस्त्रों को सुखा लूँ। मैं अपने उल्लास को बड़ी कठिनाई से छिपा सका।

मैंने उन्हें धन्यवाद दिया और स्थान ग्रहण किया। वे भी मेरे सामने ही एक बैंच पर, जो पत्थर को काटकर बनाई गई थी, बैठ गये। वे अपनी उँगलियों को एक मिट्टी के बरतन में, जिसमे एक प्रकार का तेल रखा हुआ था, बार-बार डुबोने लगे और उस पक्षी के सिर तथा पंखों पर मलने लगे।

बिना ऊपर को देखे ही वे बोले, "शक्तिशाली वायु ने इस पक्षी को जीवन और मृत्यु के बीच पत्थरों पर दे मारा था।"

तुलना-सी करते हुए मैंने उत्तर दिया, "और भयानक तूफान

ने, इससे पहले कि मेरा सिर चकनाचूर हो जाय और मेरे पर टूट जाँय, मुझे झटकाकर आपके द्वार पर भेज दिया है।"

गम्भीरतापूर्वक उन्होंने मेरी ओर देखा और बोले, "मेरी तो यही चाह है कि मनुष्य पक्षियों का स्वभाव अपनाये और तूफान मनुष्य के पर तोड़ डाले; क्योंकि मनुष्य का झुकाव भय और कायरता की ओर है और जैसे हीं वह अनुभव करता है कि तूफान जाग गया है, वह रेंगते-रेंगते गुफाओं और खाइयों में घुस जाता है और अपने को छिपा लेता है।"

मेरा उद्देश्य था कि उसके स्वतः-स्वीकृत एकान्तवास को कहानी जान लूँ, इसीलिए मैंने उन्हें यह कहकर उत्तेजित किया, "हाँ! पक्षी के पास एक ऐसा सम्मान और साहस है, जो मनुष्य के पास नहीं। मनुष्य विधान तथा सामाजिक आचारों के साये में वास करता है जो उसने अपने लिए स्वयं बनाये हैं। किन्तु पक्षी उसी स्वतन्त्र-शाश्वत विधान के अधीन रहते हैं, जिसके कारण पृथ्वी सूर्य के चारों ओर अपने रास्ते पर निरन्तर घूमती रहती है।"

उनके नेत्र और चेहरा चमकने लगे, मानो मुझमें उन्होंने एक समझदार शिष्य को पा लिया हो। वे बोले, "अति सुन्दर! यदि तुम्हें स्वयं अपने शब्दों पर विश्वास है तो तुम्हें सभ्यता और उसके दूषित विधान एवं अतिप्राचीन परम्पराओं को तुरन्त ही त्याग देना चाहिये और पक्षियों की तरह ऐसे

शून्य स्थान मे रेहना चाहिये जहाँ आकाश और पृथ्वी के महान् विधान के अतिरिक्त कुछ भी न हो।

"विश्वास रखना एक सुन्दर बात है ; किन्तु उस विश्वास को प्रयोग में लाना साहस का काम है। अनेक मनुष्य ऐसे हैं जो सागर की गर्जन के समान चीखते रहते हैं, किन्तु उनका जीवन खोखला एवं प्रवाहहीन होता है जैसे कि सड़ती हुई दल-दल, और अनेक ऐसे हैं जो अपने सिरों को पर्वत की चोटी से भी ऊपर उठाये चलते हैं, किन्तु उनकी आत्माएँ कन्दराओं के अन्धकार में सोती पड़ी रहती हैं।"

वे काँपते हुए अपनी जगह से उठे और पत्ता का खिड़की के ऊपर एक तह किये हुए कपड़े पर रख आये। तब उन्होंने कुछ सूखी लकड़ियाँ अँगीठी में डाल दीं और बोले, "अपने जूतों को उतार दो और अपने पैरों को सेक लो, क्योंकि भीगे रहना आदमी के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। तुम अपने वस्त्रों को ठीक से सुखा लो और आराम से बैठो।"

यूसुफ साहब के इस निरन्तर आतिथ्य ने मेरी आशाओं को उभार दिया। मैं आग के और समीप खिसक गया और मेरे भीगे कुरते से पानी भाप बनकर उड़ने लगा। जब वह भूरे आकाश को निहारते हुए ड्योढ़ी पर खड़े रहे, मेरा मस्तिष्क उनके आन्तरिक रहस्यों को खोजता दौड़ रहा था। मैंने एक अनजान की तरह उनसे पूछा, "क्या आप बहुत दिनों से यहाँ रह रहे हैं ?"

मेरी ओर देखे बिना ही उन्होंने शान्त स्वर में कहा, "मैं इस

स्थान पर तब आया था, जब यह पृथ्वी निराकार एवं शून्य थी, जब इसके रहस्यों पर अन्धकार छाया हुआ था, और ईश्वर की आत्मा पानी की सतह पर तैरती रहती थी।"

यह सुनकर मैं अवाक् रह गया। क्षुब्ध और अस्तव्यस्त ज्ञान को समेटने का संघर्ष करते हुए मन-ही-मन मैं बोला, "कितने अजीब व्यक्ति हैं ये और कितना कठिन है इनकी वास्तविकता को पाना! किन्तु, मुझे सावधानी के साथ, धीरे-धीरे एवं संतोष रखकर तबतक चोट-पर-चोट करनी होगी जबतक इनकी मूकता बातचीत में न बदल जाय और इनकी विचित्रता समझ में न आ जाय!"

× × ×

रात्रि अपनी अन्धकार की चादर उन घाटियों पर फैला रही थी। मतवाला तूफ़ान चिंघाड़ रहा था और वर्षा बढ़ती ही जा रही थी। मैं सोचने लगा कि बाइबिल[1] वाली बाढ़ चैतन्य को नष्ट करने और ईश्वर की धरती पर से मनुष्य की गंदगी को धोने के लिए फिर से आ रही है।

ऐसा प्रतीत होने लगा कि तत्त्वों की क्रान्ति ने यूसुफ साहब के हृदय में एक ऐसी शान्ति उत्पन्न की है, जो प्रायः स्वभाव

---

[1] ईसाइयों की धर्म-पुस्तक।

पर अपना असर छोड़ जाती है और एकान्तता को प्रसन्नता से प्रतिबिम्बित कर जाती है। उन्होंने दो मोमबत्तियाँ सुलगायीं और तब मेरे सम्मुख शराब की एक सुराही और एक बड़ी तश्तरी में रोटी, मक्खन, जैतून के फल, मधु और कुछ सूखे मेवे लाकर रक्खे। तब वह मेरे पास बैठ गये और खाने की थोड़ी मात्रा के लिए—उसकी सादगी के लिए नहीं—क्षमा माँग कर, उन्होंने मुझसे भोजन करने को कहा।

हम उस समझी-बुझी निस्तब्धता में हवा के विलाप तथा वर्षा के चीत्कार को सुनते हुए साथ-साथ भोजन करने लगे। साथ ही मैं उनके चेहरे को घूरता रहा और उनके हृदय के रहस्यों को कुरेद-कुरेदकर निकालने का प्रयास करता रहा। उनके असाधारण अस्तित्व के सम्भव कारण को भी सोचता रहा। (भोजन) समाप्त करके उन्होंने अँगीठी पर से एक पीतल की केतली उठाई और उसमें से शुद्ध सुगन्धित कॉफी दो प्यालों में उंडेल दी। तब उन्होंने एक छोटे-से लकड़ी के बक्स को खोला और, 'भाई' शब्द से सम्बोधित कर, उसमें से एक सिगरेट भेंट की। कॉफी पीते हुए मैंने एक सिगरेट ले ली, किन्तु जो कुछ भी मेरी आँखें देख रही थीं उसपर मुझे विश्वास नहीं हो रहा था।

उन्होंने मेरी ओर मुस्कराते हुए देखा और अपनी सिगरेट का एक लम्बा कश खींचकर तथा कॉफी की एक चुस्की लेकर उन्होंने कहा, "अवश्य ही तुम—मदिरा, कॉफी और सिगरेट यहाँ पाकर सोच में पड़ गये हो और मेरे खान-पान एवं ऐश-आराम

पर भी आश्चर्य कर रहे हो। तुम्हारी व्यग्रता सभी प्रकार से न्यायोचित है, क्योंकि तुम भी उन्हीं लोगों में से एक हो, जो इन बातों में विश्वास करते हैं कि लोगों से दूर रहने पर मनुष्य जीवन से भी दूर हो जाता है और ऐसे मनुष्य को उस (जीवन) के सभी सुखों से वंचित रहना चाहिए।"

मैंने तुरन्त स्वीकार कर लिया, "हाँ! ज्ञानियों का यही कहना है कि जो केवल ईश्वर की प्रार्थना करने के लिए संसार को त्याग देता है, वह जीवन के समस्त सुख और आनन्द को अपने पीछे छोड़ आता है, केवल ईश्वर द्वारा निर्मित वस्तुओं पर सन्तोष करता है और पानी और पौधों पर ही जीवित रहता है।"

जरा रुककर गहन विचारों में निमग्न वे बोले, "मैं ईश्वर की भक्ति तो उसके जीवों के बीच रहकर भी कर सकता था, क्योंकि भक्ति के लिए एकान्त नहीं चाहिए। मैंने संसार को इसलिए नहीं छोड़ा कि मुझे ईश्वर को पाना था, क्योंकि उसे तो मैं हमेशा से अपने माता-पिता के घर पर भी देखता आया हूँ। मैंने मनुष्यों का त्याग केवल इसलिए किया कि उनका और मेरा स्वभाव मिलता न था और उनकी कल्पना मेरी कल्पनाओं से मेल नहीं खाती थी। मैंने आदमी को इसलिए छोड़ा, क्योंकि मैंने देखा कि मेरी आत्मा के पहिए एक दिशा में घूम रहे हैं और दूसरी दिशा में घूमते हुए दूसरी आत्माओं के पहियों से जोर से टकरा रहे हैं। मैंने मानव-सभ्यता को छोड़ दिया,

क्योंकि मैंने देखा कि वह एक ऐसा पेड़ है जो अत्यन्त पुराना और भ्रष्ट हो चुका है, किन्तु है शक्ति-शाली एवं भयानक। उसकी जड़ें पृथ्वी के अन्धकार में बन्द हैं और उसकी शाखाएँ बादलों में खो गई हैं। किन्तु उसके फूल लोभ, अधर्म एवं पाप से बने हैं और फल दुःख, संतोष और भय से। धार्मिक मनुष्यों ने यह बीड़ा उठाया है कि जो अच्छा है, उस (सभ्यता) में भर देंगे और उसके स्वभाव को बदल देंगे, किंतु वे सफल नहीं हो पाये हैं। वे निराश एवं दुखी होकर मृत्यु को प्राप्त हुए।"

यूसुफ साहब अँगीठी की ओर थोड़ा-सा झुके, मानो अपने शब्दों की प्रतिक्रिया जानने की प्रतीक्षा में हों। मैंने सोचा कि श्रोता ही बने रहना सर्वोत्तम है। वे कहने लगे, "नहीं, मैंने एकान्तवास इसलिए नहीं अपनाया कि मैं एक संन्यासी की भाँति जीवन व्यतीत करूँ, क्योंकि प्रार्थना, जो हृदय का गीत है, चाहे सहस्रों की चीख-पुकार की आवाज से भी घिरी हो, ईश्वर के कानों तक अवश्य पहुँच जायेगी।

"एक वैरागी का जीवन बिताना तो शरीर और आत्मा को कष्ट देना है तथा इच्छाओं का गला घोंटना है। यह एक ऐसा अस्तित्व है जिसके मैं नितान्त विरुद्ध हूँ। क्योंकि ईश्वर ने आत्माओं के मंदिर के रूप में ही शरीर का निर्माण किया है और हमारा यह कर्त्तव्य है कि उस विश्वास को, जो परमात्मा ने हमें प्रदान किया है, योग्यतापूर्वक बनाये रखें।

"नहीं, मेरे भाई, मैंने परमार्थ के लिए एकान्तवास नहीं अपनाया, अपनाया तो केवल इसलिए कि आदमी और उसके विधान से, उसके विचारों एवं उसकी शिकायतों से, उसके दुःख और विलापों से दूर रहूँ।

"मैंने एकान्तवास इसलिए अपनाया कि उन मनुष्यों के चेहरे न देख सकूं, जो अपना विक्रय करते हैं और उसी मूल्य से ऐसी वस्तुएँ खरीदते है, जो आध्यात्मिक एवं भौतिक (दोनों ही) रूप में उनसे भी घटिया हैं।

"मैंने एकान्तवास इसलिए ग्रहण किया कि कहीं उन स्त्रियों से मेरी भेंट न हो जाय, जो अपने ओठों पर अनेकविध मुस्कान फैलाये गर्व से घूमती रहती है—जबकि उनके सहस्रों हृदयों की गहराईयों में बस एक ही उद्देश्य विद्यमान है...।

"मैंने एकान्तवास इसलिए ग्रहण किया कि मैं उन आत्म-सन्तुष्ट व्यक्तियों से बच सकूँ, जो अपने सपनों में ही ज्ञान की झलक पाकर यह विश्वास कर लेते हैं कि उन्होंने अपना लक्ष्य पा लिया।

"मैं समाज से इसलिए भागा कि उनसे दूर रह सकूँ, जो अपनी जागृति के समय में सत्य का आभास-मात्र पाकर संसार भर मे चिल्लाते फिरते हैं कि उन्होंने सत्य को पूर्णतः प्राप्त कर लिया है।

"मैंने संसार का त्याग किया और एकान्तवास को अपनाया, क्योंकि मैं ऐसे लोगों के साथ भद्रता बरतते थक गया था, जो

नम्रता को एक प्रकार की कमजोरी, दया को एक प्रकार की कायरता तथा क्रूरता को एक प्रकार की शक्ति समझते हैं।

"मैंने एकान्तवास अपनाया, क्योंकि मेरी आत्मा उन लोगों के समागम से थक चुकी थी, जो वास्तव में इस बात पर विश्वास करते हैं कि सूर्य, चाँद और तारे उनके खजानों से ही उदय होते हैं और उनके बगीचों के अतिरिक्त कहीं अस्त नहीं होते।

✓"मैं उन पदलोलुपों के पास से भागा, जो लोगों की आँखों में सुनहरी धूल झोंककर और उनके कानों को अर्थ-विहीन आवाजों से भरकर उनके सांसारिक जीवन को छिन्न-भिन्न कर देते हैं।

"मैंने एकान्तवास ग्रहण किया; क्योंकि मुझे तबतक कभी किसी से दया न मिली, जबतक मैंने जी-जान से उसका पूरा-पूरा मूल्य न चुका दिया।

✓ "मैं उन धर्म-गुरुओं से अलग हुआ, जो अपने धर्मोपदेशों के अनुकूल स्वयं जीवन नहीं बिताते, किन्तु अन्य लोगों से ऐसे आचरण की माँग करते हैं, जिसे वह स्वयं अपनाते नहीं।

"मैंने एकान्तवास अपनाया; क्योंकि उस महान और विकट संस्था से ही मैं विमुख था, जिसे लोग सभ्यता कहते हैं और जो मनुष्य जाति की अविच्छिन्न दुर्गति पर एक सुरूप दानवता के रूप में छाई हुई है।

"मैं एकान्तवासी इसलिए बना कि इसी में, आत्मा के लिए, हृदय के लिए एवं शरीर के लिए पूर्ण जीवन है। (अपने इस

एकान्तवास में) मैंने वह मनोहर देश ढूँढ़ निकाला है जहाँ सूर्य का प्रकाश विश्राम करता है; जहाँ पुष्प अपनी सुगन्ध को अपने मुक्त श्वासों द्वारा शून्य में बिखेरते रहते हैं, और जहाँ सरिताएँ गाती हुई सागर को जाती हैं। मैंने ऐसे पहाड़ों को खोज निकाला है, जहाँ मैं स्वच्छ वसन्त को जागते हुए देखता हूँ और ग्रीष्म की रंगीन अभिलाषाओं, शरद के वैभवपूर्ण गीतों एवं शीत के सुन्दर रहस्यों को पाता हूँ। ईश्वर के राज्य के इस दूर कोने में मैं इसलिए आया हूँ, क्योंकि विश्व के रहस्यों को जानने एवं प्रभु के सिंहासन के निकट पहुँचने के लिए भी तो मैं भूखा हूँ।"

× × ×

यूसुफ साहब ने तब एक लम्बी साँस ली, मानो किसी भारी बोझ से अब मुक्ति पा गये हों। उनके नेत्र अनोखी एवं जादू-भरी किरणों से सतेज हो उठे और उनके उज्ज्वल चेहरे पर गर्व, संकल्प एवं सन्तोष झलकने लगा।

कुछ मिनट ऐसे ही गुज़र गये। मैं उन्हें ग़ौर से देखता रहा और जो मेरे लिए अभी तक अज्ञात था, उसपर से आवरण हटता गया। तब मैंने उनसे कहा, "निस्संदेह आपने जो कुछ कहा, उसमें अधिकांश सही है; किन्तु लक्षणों को देखकर सामाजिक रोगों का सही अनुमान लगाने से यह प्रमाणित हो गया है कि आप एक अच्छे चिकित्सक हैं। मैं समझता हूँ कि रोगी समाज को आप ऐसे चिकित्सक की अति आवश्यकता है, जो उसे रोग से मुक्त करे अथवा मृत्यु प्रदान करे। यह पीड़ित संसार आपसे

दया की भीख चाहता है। क्या यह दयापूर्ण एवं न्यायोचित होगा कि आप एक पीड़ित रोगी को छोड़ जायँ और उसे अपने उपकार से वंचित रहने दें?"

वे कुछ सोचते हुए मेरी ओर एकटक देखने लगे और फिर निराश स्वर में बोले, "चिकित्सक सृष्टि के आरम्भ से ही मानव को उनकी अव्यवस्थाओं से मुक्त कराने की चेष्टाएँ करते आ रहे हैं। कुछ चिकित्सकों ने चीरफाड़ का प्रयोग किया और कुछ ने औषधियों का; किन्तु महामारी बुरी तरह फैलती गई। मेरा तो यही विचार है कि रोगी अगर अपनी मैली-कुचैली शैया पर ही पड़े रहने में सन्तुष्ट रहता और अपनी चिरकालीन व्याधि पर मनन-मात्र करता तो अच्छा होता! लेकिन इसके बदले होता क्या है? जो (व्यक्ति) भी रोगी मानव मिलने आता है, अपने ऊपरी लबादे के नीचे से हाथ निकालकर वह (रोगी) उसी आदमी को गर्दन से पकड़कर ऐसा धर दबाता है कि वह दम तोड़ देता है। हाय यह कैसा अभाग्य है! दुष्ट रोगी अपने चिकित्सक को ही मार डालता है—और फिर अपने नेत्र बन्द करके मन-ही-मन कहता है, 'वह एक बड़ा चिकित्सक था।' न, भाई ना संसार में कोई भी इस मनुष्यता को लाभ नहीं पहुँचा सकता। बीज बोनेवाला कितना भी प्रवीण एवं बुद्धिमान् क्यों न हो, शीतकाल में कुछ भी नहीं उगा सकता!

किन्तु मैंने युक्ति दी, "मनुष्यों का शीत कभी तो समाप्त होगा ही; फिर सुन्दर वसन्त आयेगा और तब अवश्य ही ऐ

में फूल खिलेंगे और फिर से घाटियों में झरने बह निकलेंगे।"

उनकी भृकुटी तन गई और कड़ुवे स्वर में उन्होंने कहा, "काश ईश्वर ने मनुष्य का जीवन—जो उसकी परिपूर्ण वृत्ति है, वर्ष की भाँति ऋतुओं में बाँट दिया होता! क्या मनुष्यों का कोई भी गिरोह जो ईश्वर के सत्य एवं उसकी आत्मा पर विश्वास रखकर जीवित है, इस भू-खण्ड पर फिर से जन्म लेना चाहेगा? क्या कभी ऐसा समय आयेगा जब मनुष्य स्थिर होकर दिव्य चेतना की दाईं ओर टिक सकेगा, जहाँ दिन के उजाले की उज्ज्वलता तथा रात्रि की शान्त निस्तब्धता में वह खुश रह सके? क्या (मेरा) यह सपना कभी सत्य हो पायेगा? अथवा क्या यह (सपना) तभी सच्चा होगा जब यह धरती मनुष्य के मांस से ढक चुकी होगी और उसके रक्त से भीग चुकी होगी?"

युसुफ़ साहब तब खड़े हो गये और उन्होंने आकाश की ओर ऐसे हाथ उठाया मानो किसी दूसरे संसार की ओर इशारा कर रहे हों और बोले, "यह नहीं हो सकता। इस संसार के लिए यह केवल एक सपना है। किन्तु मैं अपने लिए इसकी खोज कर रहा हूँ और जो मैं यहाँ खोज रहा हूँ वही मेरे हृदय के कोने-कोने में, इन घाटियों में और इन पहाड़ों में व्यापक है।" उन्होंने अपने उत्तेजित स्वर को और भी ऊँचा करके कहा, "वास्तव में मैं जो जानता हूँ वह तो मेरे अन्तःकरण की चीत्कार है। मै यहाँ रह रहा हूँ; किन्तु मेरे अस्तित्व की गहराइयों में भूख और प्यास भरी हुई है, और अपने हाथों द्वारा बनाये एवं सजाये

पात्रों में ही जीवन की मदिरा तथा रोटी लेकर खाने में मुझे आनंद मिलता है। इसीलिए मैं मनुष्यों के निवासस्थान को छोड़कर यहाँ आया हूँ और अन्त तक यहीं रहूँगा।"

वे उस कमरे में व्याकुलता से आगे-पीछे घूमते रहे और मैं उनके कथन पर विचार करता रहा तथा समाज के गहरे घावों की व्याख्या का अध्ययन करता रहा।

तब मैंने यह कहकर ढंग से एक और चोट की, "मैं आपके विचारों एवं आपकी इच्छाओं का पूर्णतः आदर करता हूँ और आपके एकान्तवास पर मैं श्रद्धा भी करता हूँ और ईर्ष्या भी। किन्तु आपको अपने से अलग करके अभागे राष्ट्र ने काफी नुकसान उठाया है; क्योंकि उसे एक ऐसे समझदार सुधारक की आवश्यकता है, जो कठिनाइयों में उसकी सहायता कर सके और उसकी सुप्त चेतना को जगा सके।"

उन्होंने धीमे से अपना सिर हिलाकर कहा, "यह राष्ट्र भी दूसरे राष्ट्रों की तरह ही है; और यहाँ के लोग भी उन्हीं तत्त्वों से बने हैं जिनसे शेष मानव। अन्तर है तो मात्र बाह्य आकृतियों का, सो कोई अर्थ ही नहीं रखता। हमारे पूर्वीय राष्ट्रों की वेदना सम्पूर्ण संसार की वेदना है। और जिसे तुम पाश्चात्य सभ्यता कहते हो वह और कुछ नहीं, उन अनेक दुखान्त भ्रामक आभासों का एक और रूप है।

"पाखण्ड तो सदैव ही पाखण्ड रहेगा, चाहे उसकी उँगलियों को रँग दिया जाय तथा चमकदार बना दिया जाय। वञ्चना

कभी न बदलेगी, चाहे उसका स्पर्श कितना भी कोमल एवं मधुर क्यों न हो जाय! असत्यता कभी भी सत्यता में परिणत नहीं की जा सकती, चाहे तुम उसे रेशमी कपड़े पहनकर महलों में ही क्यों न बिठा दो। और लालसा कभी सन्तोष नहीं बन सकती है। रही अनन्त गुलामी, चाहे वह सिद्धांतों की हो, रीति-रिवाजों की हो या इतिहास की हो, सदैव गुलामी ही रहेगी, कितना ही वह अपने चेहरे को रंग ले और अपनी आवाज़ को बदल ले। गुलामी अपने डरावने रूप में गुलामी ही रहेगी, तुम चाहे उसे आज़ादी ही कहो।

"नहीं मेरे भाई, पश्चिम न तो पूर्व से ज़रा भी ऊँचा है और न ज़रा भी नीचा। दोनों में जो अंतर है वह शेर और शेर-बबर के अंतर से अधिक नहीं है। समाज के बाह्य रूप के परे मैंने एक सर्वोचित एवं सम्पूर्ण विधान खोज निकाला है, जो सुख-दुःख एवं अज्ञान सभी को एक समान बना देता है। वह (विधान) न एक जाति को दूसरी से बढ़कर मानता है और न एक को उभारने के लिए दूसरे को गिराने का प्रयत्न करता है।"

मैंने विस्मय से कहा, "तब मनुष्यता का अभिमान झूठा है और उसमें जो कुछ भी है वह सभी निस्सार है।"

उन्होंने जल्दी से उत्तर दिया, "हाँ, मनुष्यता एक मिथ्या अभिमान है और उसमें जो कुछ भी है वह सभी मिथ्या है! आविष्कार एवं खोज तो मनुष्य अपने उस समय के मनो-रंजन एवं आराम के लिए करता है, जब वह पूर्णतया थक

हार गया हो। देशीय दूरी को जीतना और समुद्रों पर विजय पाना एक ऐसा नश्वर फल है जो न तो आत्मा को संतुष्ट कर सकता है, न हृदय का पोषण एवं उसका विकास ही; क्योंकि वह (विजय) नितान्त ही अप्राकृतिक है। जिन रचनाओं व सिद्धांतों को मनुष्य कला एवं ज्ञान कहकर पुकारता है; वे (वंधन की) उन कड़ियों और सुनहरी जंजीरो के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है, जिन्हें मनुष्य अपने साथ घसीटता (चलता) है और जिनके चमचमाते प्रतिविम्बों तथा झनझनाहट से वह प्रसन्न होता रहता है। (वास्तव में) वे मजबूत पिंजरे हैं, जिन्हें मनुष्य ने शताब्दियों पहले बनाना आरंभ किया था, किन्तु तब वह यह न जानता था कि उन्हें वह अन्दर की तरफ से बना रहा है, और शीघ्र ही वह स्वयं बन्दी बन जायेगा—हमेशा-हमेशा के लिए। हाँ, हाँ, मनुष्य के कर्म निष्फल हैं और उसके उद्देश्य निरर्थक हैं और इस पृथ्वी पर सभी कुछ निस्सार है।"

वे जरा-से रुके और फिर धीरे-से बोलते गये, "और जीवन की इन समस्त निस्सारताओं मे केवल एक ही वस्तु है जिससे आत्मा प्रेम करती है और जिसे वह चाहती है। एक और अकेली देदीप्यमान वस्तु !"

मैंने कंपित स्वर में पूछा, "वह क्या ?" मिनट भर तक उन्होंने मुझे देखा और तब अपनी आँखें मीच लीं। अपने हाथ छाती पर रखे। उनका चेहरा तमतमाने लगा और विश्वसनीय एवं गम्भीर आवाज में वे बोले, "वह है आत्मा की जागृति,

वह है हृदय की आन्तरिक गहराइयों का उद्बोधन। वह सबपर छा जानेवाली एक महाप्रतापी शक्ति है, जो मनुष्य-चेतना में कभी भी प्रबुद्ध होती है और उसकी आँखें खोल देती है। तब उस महान् सङ्गीत की उज्ज्वल धारा के बीच, जिसे अनंत प्रकाश घेरे रहता है, वह जीवन दिखाई पड़ता है, जिससे लगा हुआ मनुष्य सुन्दरता के स्तम्भ के समान आकाश और पृथ्वी के बीच खड़ा रहता है।

"वह एक ऐसी ज्वाला है जो आत्मा में अचानक सुलग उठती है और हृदय को तपाकर पवित्र बना देती है, पृथ्वी पर उतर आती है और विस्तृत आकाश में चक्कर लगाने लगती है।

"वह एक दया है जो मनुष्य के हृदय को आ घेरती है, ताकि उसकी प्रेरणा से मनुष्य उन सबको अवाक् बना कर अमान्य कर दे, जो उसका विरोध करते हैं। एवं जो उसके महान् अर्थ समझने में असमर्थ रहते हैं उनके विरुद्ध वह (शक्ति) विद्रोह करती है।"

"वह एक रहस्यमय हाथ है, जिसने मेरे नेत्रों के आवरण को तभी हटा दिया, जब मैं समाज का सदस्य बना हुआ अपने परिवार, मित्रों एवं हितैषियों के बीच रहा करता था।

"कई बार मैं विस्मित हुआ और मन-ही-मन कहता रहा, 'क्या है यह सृष्टि और क्यों मैं उन लोगों से भिन्न हूँ, जो मुझे देखते हैं? मैं उन्हें कैसे जानता हूँ, उन्हें मैं कहाँ मिला और क्यों मैं उनके बीच रह रहा हूँ? क्या मैं उन लोगों में एक अजनबी हूँ अथवा वे ही इस संसार के लिए अपरिचित हैं—

ऐसे संसार के लिए, जो दिव्य चेतना से निर्मित है और जिसका मुझपर पूर्ण विश्वास है ?"

अचानक वे चुप हो गये, जैसे कोई भूली बात स्मरण कर रहे हों, जिसे वह प्रकट नही करना चाहते। तब उन्होंने अपनी बाँहें फैला दीं और फुसफुसाया, "आज से चार वर्ष पूर्व, जब मैंने संसार का त्याग किया, मेरे साथ यही तो हुआ था। इस निर्जन स्थान में मैं इसलिए आया कि जागृत चेतना में रह सकूँ और सम्मनस्कता व सौम्य नीरवता के आनंद को भोग सकूँ।"

गहन अन्धकार की ओर घूरते हुए वे द्वार की ओर बढ़े, मानो तूफान से कुछ कहना चाहते हों। पर वे प्रकम्पित स्वर में बोले, "यह आत्मा के भीतर की जागृति है। जो इसे जानता है, वह इसे शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता, और जो नहीं जानता, वह अस्तित्व के विवश करनेवाले किन्तु सुन्दर रहस्यों के बारे में कभी न सोच सकेगा।"

× × ×

एक घण्टा बीत गया, यूसुफ़-अल-फाख़री कमरे के एक कोने से दूसरे कोने तक लम्बे डग भरते घूम रहे थे। वे कभी-कभी रुककर (तूफान के कारण) अत्यधिक भूरे आकाश को तकने लगते थे। मैं ख़ामोश ही बना रहा और उनके एकान्तवासी जीवन की दु:ख-सुख की मिली-जुली तान पर सोचता रहा।

कुछ देर बाद रात्रि होने पर वे मेरे पास आये और देर तक

मेरे चेहरे को घूरते रहे; मानो उस मनुष्य के चित्र को अपने मानस-पट पर अंकित कर लेना चाहते हों, जिसके सम्मुख उन्होंने अपने जीवन के गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन कर दिया हो। (विचारों की) व्याकुलता से मेरा मन भारी हो गया था और (तूफान की) धुन्ध के कारण मेरी आँखें बोझल हो चली थीं।

तब उन्होंने शान्तिपूर्वक कहा, "मैं अब रात भर तूफान में घूमने जा रहा हूँ, ताकि प्रकृति के भावाभिव्यंजन की समीपता भाँप सकूँ। यह मेरा अभ्यास है, जिसका आनन्द मैं अधिकतर शरद एवं शीत में लेता हूँ। लो, यह थोड़ी मदिरा है और यह तम्बाकू। कृपा कर आज रात भर के लिए मेरा घर अपना ही समझो।"

उन्होंने अपने आप को एक काले लबादे से ढँक लिया और मुस्कराकर बोले, "मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि सुबह जब तुम जाओ तो बिना आज्ञा के प्रवेश करनेवालों के लिए मेरे द्वार बन्द करते जाना; क्योंकि मेरा कार्यक्रम है कि मैं सारा दिन पवित्र देवदारों के वन में घूमते बिताऊँगा।" तब वे द्वार की ओर बढ़े और एक लम्बी छड़ी साथ लेकर बोले, "यदि तूफान फिर कभी तुम्हें अचानक इस जगह के आसपास घूमते हुए आ घेरे, तो इस आश्रम में आश्रय लेने में संकोच न करना। मुझे आशा है कि अब तुम तूफ़ान से प्रेम करना सीखोगे, भयभीत नहीं होना! सलाम, मेरे भाई!"

उन्होंने द्वार खोला और अन्धकार में अपने सिर को ऊपर

उठाये बाहर निकल गये। यह देखने के लिए कि वे कौन-से रास्ते से गये हैं, मैं ड्योढ़ी पर ही खड़ा रहा, किन्तु (शीघ्र ही) वे मेरी आँखों से ओझल हो गये। कुछ मिनटों तक मैं घाटी के कंकड़-पत्थरों पर उनकी पदचाप सुनता रहा।

× × ×

गहन विचारों की उस रात्रि के पश्चात् जब सुबह हुई। तब तूफान गुजर चुका था और आसमान निर्मल हो गया था। सूर्य की गर्म किरणों में मैदान और घाटियाँ तमतमा रही थीं। नगर को लौटते समय मैं उस आत्मिक जागृति के सम्बन्ध में सोचता जाता था, जिसके लिए यूसुफ-अल-फाखरी ने इतना कुछ कहा था। वह (जागृति) मेरे अंग-अंग में व्याप रही थी। मैंने सोचा कि मेरा यह स्फुरण अवश्य ही प्रकट होना चाहिए। जब मैं कुछ शान्त हुआ तो मैंने देखा कि मेरे चारों ओर पूर्णता एवं सुन्दरता बसी हुई है।

जैसे ही मैं उन चीखते-पुकारते (नगर के) लोगों के पास पहुँचा, मैंने उनकी आवाजों को सुना और उनके कार्यों को देखा, तो मैं रुक गया और अपने अन्तःकरण से बोला, "हाँ, आत्मबोध मनुष्य के जीवन में अति आवश्यक है और यही मानव-जीवन का एकमात्र उद्देश्य है। क्या स्वयं सभ्यता अपने समस्त दुःखपूर्ण बहिरंग में आत्मिक जागृति के लिए एक महान ध्येय नहीं है? तब हम किस प्रकार एक ऐसे पदार्थ के अस्तित्व से इन्कार कर सकते हैं, जिसका अस्तित्व ही अभीप्सित योग्यता की समानता

का पक्का प्रमाण है। वर्तमान सभ्यता चाहे नाशकारी प्रयोजन ही रखती हो; किन्तु ईश्वरीय विधान ने उस (प्रयोजन) के लिए एक ऐसी सीढ़ी प्रदान की है जो स्वतन्त्र अस्तित्व की ओर ले जाती है।

× × ×

मैंने फिर कभी यूसुफ-अल-फाखरी को नहीं देखा, क्योंकि मेरे अपने प्रयत्नों के कारण, जिनके द्वारा मैं सभ्यता की बुराइयों को दूर करना चाहता था, उसी शरद ऋतु के अन्त में मुझे उत्तरी लेबनान से देश-निकाला दे दिया गया, और मुझे एक ऐसे दूर-देश में प्रवासी का जीवन बिताना पड़ा, जहाँ के 'तूफान' बहुत कमज़ोर हैं, और उस देश में एक आश्रमवासी का-सा जीवन बिताना एक अच्छा-खासा पागलपन है, क्योंकि यहाँ का समाज भी बीमार है।

: २ :

सदियों की राख

रात हो चुकी थी और चारों ओर निस्तब्धता छाई हुई थी। सूर्यनगर[1] में चेतना ऊँघ रही थी। जैतून और लारेल के वृक्षों के बीच भव्य मन्दिरों के चारों ओर बिखरे हुए मकानों में दिये बुझ चुके थे। संगमरमर के स्तम्भों को, जो रात्रि की निस्तब्धता में भूतों की तरह खड़े ईश्वर के मन्दिरों की रक्षा कर रहे थे, चन्द्रमा अपनी रुपहली किरणों से नहला रहा था और व्यग्रता से लेबनान के उन मीनारों को तक रहा था, जो दूर पहाड़ियों के माथे पर खड़े मानो चुनौती दे रहे थे।

उस समय, जबकि आत्माएँ निद्रा के प्रलोभन से वशीभूत थीं, बड़े पुजारी के लड़के नाथन ने इश्तार के मन्दिर में प्रवेश किया। उसके काँपते हाथों में एक मशाल थी। उसने तबतक दीपक और धूपबत्तियाँ जलाये रखीं जबतक उनकी सुगन्ध

---

[1] 'बालबेक' अथवा 'बाल-नगर' पुराने जमाने में सूर्यनगर के नाम से प्रसिद्ध था और यह नगर सूर्यदेव हीलिओ पोलिग के सम्मान में बनाया गया था। ऐतिहासिको का मत है कि एक समय मध्य-पूर्व में यह सबसे सुन्दर नगर माना जाता था। इसके खंडहरो द्वारा, जिन्हें आज भी देखा जा सकता है, यह ज्ञात होता है कि यहाँ की शिल्प-कला आदि पर रोमनो का प्रभाव रहा है, क्योंकि उस समय सीरिया देश पर इन्ही का राज्य था।

कोने-कोने तक न फैल गई। तब वह देवमूर्ति के सम्मुख घुटनों के बल बैठ गया। देवमूर्ति हाथीदाँत तथा सोने की पच्चीकारी के आभूषणों से सुसज्जित थी। नाथन ने तब इश्तार की ओर अपना हाथ उठाया, और दर्द-भरी और घुटती हुई आवाज़ में बोला, "मुझ पर दया कर, हे महान् इश्तार! प्रेम और सुन्दरता की देवी! मुझ पर दया कर और मृत्यु के हाथों को मेरी प्रेमिका पर से दूर हटा ले, मैंने उसे तेरी इच्छा से चुना है। वैद्यों की औषधियाँ तथा ओझों की झाड़-तावीजें उसको जीवन-दान न दे सकीं। न ही मायावियों अथवा पुजारियों की प्रार्थनाएँ ही कुछ काम आईं। तेरी पवित्र इच्छा को छोड़कर अब और कुछ भी करने को शेष नहीं रहा है। अब तू ही मेरी पथ-प्रदर्शिका और सहायिका है। मुझ पर दया कर और मेरी प्रार्थनाएँ स्वीकार कर। मेरे भग्न हृदय और क्षुब्ध आत्मा की ओर देख, और मेरी प्रेमिका के जीवन को बचा ले। ताकि हम तेरे प्रेम-रहस्यों का आनंद ले सकें और तेरी शक्ति और सर्वज्ञता का रहस्योद्घाटन करने वाले यौवन के सौंदर्य की छटा को देख सकें। हे महान् इश्तार! अपने हृदय की गहराइयों से मैं पुकारता हूँ और अन्धकार की भीषणता में तेरी दया चाहता हूँ। महान् इश्तहार, मेरी पुकार सुन! मैं तेरा अच्छा सेवक नाथन हूँ—श्रेष्ठ पुजारी हिरम का बेटा और मैं अपने सभी कर्मों एवं वचनों को तेरी ही महानता के प्रति समर्पित करता हूँ।

"सभी युवतियों में मैंने केवल एक युवती से प्यार किया

और उसे अपना जीवन-साथी बनाया। किन्तु प्रेत-वधुएं[1] उससे ईर्ष्या करने लगीं। उन्होंने उसके शरीर में एक अजीब-सी पीड़ा पैदा कर दी और मृत्यु-दूत को उसके पास भेज दिया, जो उसकी शैया के सिरहाने एक भूखे शिकारी की भाँति खड़ा अपने काले पंख फैलाए जीवनान्तक पंजों को उसपर तेज करने को तैयार बैठा है। अब मैं यहाँ तुझसे प्रार्थना करने आया हूं। मुझपर दया कर और एक ऐसे फूल की रक्षा कर, जो अभी जीवन की उष्णता के साथ खेला तक भी नहीं है।

"मृत्यु के पंजे से उसकी रक्षा कर, ताकि हम खुशी-खुशी तेरा स्तुति-गान कर सकें, तेरे सम्मान में तेरी प्रतिमा पर बलि चढ़ा सकें, धूप जला सकें, तेरे पूजा-मण्डप के बरामदे पर गुलाब तथा नील कमलों की सेज बिछा सकें और तेरी पवित्र समाधि को धूपबत्ती से सुरभित कर सकें। उसे बचा ले, हे चमत्कारों की देवी और इस दुःख के विरुद्ध सुख के संघर्ष में मृत्यु पर प्रेम की विजय होने दे।" तब नाथन चुप हो गया। उसकी आँखें सजल थीं और उसका हृदय दर्दभरी आहें भर रहा था। वह बराबर प्रार्थना करता रहा, "हा, मेरी कल्पना छिन्न-

---

[1] अज्ञानता के समय में अरबों में यह विश्वास था कि यदि एक प्रेत-वधु (युवा प्रेत-प्रात्मा) किसी युवक से प्रेम करने लगती है तो वह उसे विवाह करने से रोकती है। यदि वह विवाह कर लेता है तो वधु को मार डालती है। इस प्रकार के धार्मिक अन्ध-विश्वास आज भी लेबनान के छोटे-छोटे ग्रामों में प्रचलित है।

भिन्न हुई, देवी इश्तार, मेरा हृदय भीतर-ही-भीतर घुल रहा है ! अपनी दया से मेरी प्रेयसी को बचाकर मुझे जीवन-दान दे !"

उसी समय नाथन के गुलामों में से एक ने मन्दिर में प्रवेश किया और जल्दी से नाथन के पास आकर उसके कानों में फुसफुसाया, "उन्होंने अपनी आँखें खोल दी हैं प्रभु, और बिछौने के चारों ओर देखकर जब आप उन्हें दीखे नहीं तो वह आपको पुकारने लगीं। मैं दौड़ा-दौड़ा आपको यही संदेश देने आया हूँ।"

नाथन जल्दी से बाहर निकल आया और उसके पीछे-पीछे गुलाम भी।

जब वह अपने मकान पर पहुँचा तो उसने रुग्ण युवती के शयन-कक्ष में प्रवेश किया और उसकी शैया पर झुककर उसका रक्तहीन पीला हाथ अपने हाथों में ले लिया। उसके होठों पर कई चुम्बन अंकित कर दिये, मानो वह अपने जीवन में से उसमें नव-जीवन फूँकने का प्रयत्न कर रहा है। तब युवती ने रेशमी गद्दे पर अपना सिर हिलाया और अपने नेत्र खोले। उसके ओठों पर मधुर मुस्कान फैल गई, जो उसके जीर्ण शरीर में चेतना का एक क्षीण अवशेष मात्र थी। वह हार्दिक पुकार की एक ऐसी प्रतिध्वनि थी, जो विश्राम की ओर दौड़ रही हो। तब एक ऐसी आवाज़ में, जो एक कमजोर माँ के स्तन पर पड़े हुए बच्चे के क्षीण चीत्कारों को भी जड़ बना देती है; वह

बोली, "देवी ने मुझे बुलाया है और मुझे तुमसे वियुक्त करने के लिए मृत्यु आ गई है। किन्तु डरो नहीं; देवी की इच्छा पवित्र है और मृत्यु की माँग न्यायोचित । मैं अब विदा हो रही हूँ और मैं सुन रही हूँ आकाश से उतरती हुई मृत्यु की फड़फड़ाहट को। किन्तु प्रेम और यौवन के पात्र हमारे हाथों में अभी भी भरे हुए हैं और जीवन के पुष्पमय पथ हमारे सम्मुख अभी भी फैले हुए हैं। मेरे प्रियतम ! आत्मा की कमान पर मैं चढ़ रही हूँ किन्तु मैं फिर इस संसार में वापिस आऊँगी, क्योंकि जो प्रेमी आत्माएँ प्रेम की मृदुता तथा यौवन के आनन्द का उपभोग करने के पहले ही अनन्त में समा जाती हैं, उन्हें महान् इश्तार फिर जन्म देती है।

"हम फिर मिलेंगे, मेरे नाथन ! और कुसुद की पंखुड़ियों के प्यालों में प्रभात की ओस साथ-साथ पियेंगे तथा सतरङ्गी इन्द्र-धनुष के ऊपर-ही-ऊपर विमुक्त क्षेत्रों में घूमनेवाले पक्षियों के साथ आनन्द करेंगे; तबतक के लिए मेरी चिर विदा !"[1]

---

[1] हमारी भाँति अरब भी पुनर्जन्म में विश्वास करते है। यहाँ दो महा-पुरुषों के कुछ शब्द देना अनुचित न होगा । हजरत मुहम्मद ने कहा है, "तू मर गया किन्तु खुदा फिर तुझे वापिस लायेगा और वह फिर तुझे मारेगा एवं फिर जिलायेगा, जबतक कि तू उसमें न समा जायगा ।" और महात्मा बुद्ध ने कहा है—"कल तक हम संसार में थे, किन्तु अब हम लौट आये हैं। फिर हम वहाँ जायेंगे, जब तक हम पूर्णतः ईश्वर में न समा जायें।"

उसकी आवाज क्षीण पड़ती गई और उसके ओंठ उस एक अकेले फूल की तरह काँपने लगे जो प्रभात के पवन-झकोरों से हिल रहा हो। आँसू बहाते हुए नाथन ने उसका आलिंगन किया और जैसे ही उसने अपने ओंठों को उसके ओठों पर रक्खा, उसने अनुभव किया कि वे (ओंठ) एक शिला की भाँति ठंडे हो चुके हैं। उसने एक विकट चीख मारी और अपने वस्त्रों को फाड़ने लगा। वह उसके मृत शरीर पर गिर पड़ा, जब कि उसकी काँपती आत्मा जीवन के पहाड़ एवं मृत्यु की खाई के बीच आवेश में तिर रही थी।

इश्तार के बड़े पुजारी के भवन के कोने-कोने से अति विकट गड़गड़ाहट, कष्टदायक क्रंदन तथा कठोर रुदन की आवाजें जब सुनाई दीं तो रात्रि की निस्तब्धता में निद्रित आत्माएँ जाग उठीं। औरतें और बच्चे भयाक्रांत हो उठे।

और जब विश्रांत प्रभात जागा एवं लोग नाथन से संवेदना प्रकट करने गये तो उन्हें बताया गया कि वह वहाँ नहीं है एक पक्ष के बाद पूर्व से आये हुए एक कारवाँ के सरदार ने बताया कि उसने नाथन को दूर वीरानों में देखा है। वह मृगों के झुण्ड के साथ भटकता फिर रहा था।

अदृश्य पैरों से सभ्यता के दुर्बल शरीर को कुचलती हुई सदियाँ गुजर गईं। तब प्रेम और सौंदर्य की देवी ने देश को त्याग दिया था और एक अद्भुत और चंचल देवी ने उसका स्थान ग्रहण किया। उसने सूर्यनगर के सभी भव्य मन्दिरों को नष्ट कर दिया

और उसके सुन्दर भवनों को उखाड़-पछाड़ दिया। खिली हुई वाटिकाएँ और उपजाऊ मैदान उजड़े पड़े हुए थे। वहाँ उन भग्नावशेषों के सिवा कुछ भी शेष न रहा था, जो पीड़ित आत्माओं को अतीत के प्रेतों की याद दिला रहे थे और जो इस प्रकार उन्हें पुरातन भव्यता की महत्ता को प्रतिध्वनित कर रहे थे।

किन्तु निर्मम कालात्मा, जिसने आदमी की मेहनत को तो कुचल दिया, पर उसके स्वप्नों को नष्ट न कर सकी, न ही उसके प्रेम को क्षीण कर सकी, क्योंकि स्वप्न और स्नेह अनन्त आत्मा के साथ ही अमर हैं। वे (प्रेम और स्वप्न) थोड़ी देर के लिए उसी तरह तिरोहित हो सकते हैं; जैसे सूर्य का पीछा करते हुए रात पड़ती है अथवा सितारों का पीछा करते हुए प्रभात होता है—किन्तु आकाश के प्रकाश की भाँति वे अवश्य ही वापस लौट आते हैं।

× × ×

अनेक वर्ष बाद—

दिन बीत चुका था और प्रकृति सोने के लिए तरह-तरह की तैयारियाँ कर रही थी। सूर्य ने बालबेक नगर के मैदानों पर से अपनी सुनहरी किरणें समेट ली थीं। अली-अल-हुसैनी अपने पशुओं को मन्दिरों के खण्डहरों के बीच झोंपड़ी में ले आया। वह उन प्राचीन मीनारों के समीप बैठ गया, जो युद्ध में मारे येग अनगिनत सिपाहियों के अस्थि-पिंजरों के समान खड़ी हुई

थीं। उसकी बांसुरी के राग से मुग्ध हो भेड़ों ने उसको चारों ओर से घेर लिया। रात आधी से भी ज्यादा बीती और आकाश ने आनेवाले दिन के बीज अन्धकार की गहरी लीकों में बो दिए। अली की आँखें जाग्रत अवस्था में ही सपने देखते-देखते थक गई थीं और भयानक निस्तब्धता में टूटी हुई दीवारों पर से भूतों के जुलूस का गुजरते देख उसका मस्तिष्क परेशान हो उठा था। वह अपनी बाँह के सहारे झुक गया और जरा देर बाद ही निद्रा ने अपने मीठे आवरण के अन्तिम छोर से उसको ढक लिया—एक कोमल बादल की भाँति, जो एक शांत झील को छू रहा हो। वह अपने को भूल गया और अपनी ही अदृश्य सत्ता में खो गया। वहाँ उसने गहरे स्वप्न तथा मनुष्य के सिद्धान्तों एवं विधानों से भी ऊँचे विचारों को पाया। उसका दृष्टिक्षेत्र फैल गया और जीवन के गुप्त रहस्य उसे दृष्टिगोचर होने लगे। उसकी आत्मा ने समय की दौड़ को, जो कि शून्य की ओर भागी जा रही थी, छोड़ दिया। वह अकेला ही समान विचारों तथा स्पष्ट भावनाओं के बीच खड़ा था। जीवन में पहली बार अली को रूहानी अकाल के कारण ज्ञात हुए, जो सदैव उसके यौवन के अंग-संग रहे हैं। वह अकाल, जो जीवन की कटुता और मिठास के बीच खाई को पाट देता है। वह प्यास, जो प्रेम की आहों एवं तृप्ति के मौन को संतोष के साथ जोड़ देती है। वह अभिलाषा जो संसार की भव्यता से पराजित नहीं हो सकती, न सदियों

के गुजरने से बदल ही सकती है। अतः उसने अपने अन्तर में एक अद्भुत स्नेह और एक दयापूर्ण कोमलता की विशाल लहर का अनुभव किया। वह एक स्मरण-शक्ति थी, जो श्वेत लकड़ी (लुआठी) पर रक्खी हुई एक धूपवत्ती के समान स्वयं ही उत्तेजित हो रही थी। वह एक अद्भुत जादूभरा प्रेम था, जिसकी कोमल उँगलियो ने अली के हृदय को छू लिया था, जैसे एक संगीतकार की कोमल उँगलियाँ काँपते हुए तारों को छू लेती हैं। शून्य में से उत्पन्न होकर तेजी से वढ़ने वाली वह एक नवशक्ति थी, जो अपनी वास्तविकता से गले मिल रही थी और आत्मा को पूर्ण प्रेम से भेंट रही थी, जिससे एक साथ कष्ट तथा सुख का अनुभव होता था।

अली ने खँडहरों की ओर देखा और जव उसने उन गौरवपूर्ण किन्तु उजड़ी समाधियों और मन्दिरों पर दृष्टि फेंकी जो अभी भी उसी शान-शौकत तथा अदम्यता से खड़े थे, जैसे कि वहुत समय पूर्व रहे होंगे, उसके भारी नयन सतेज हो उठे। उसकी पलके रुक गई और हृदय की धड़कन तेज हो गई। एक अन्धे आदमी की तरह, जिसकी ज्योति अचानक लौट आई हो, वह देखने और सोचने-विचारने लगा। उसने उन वत्तियों तथा चाँदी के पात्रों को स्मरण किया, जो उस सर्व-शक्तिदायिनी अलंकृत एवं सर्वप्रिय देवी की मूर्ति को चारों ओर से घेरे रहते होंगे। उसने उन पुजारियों को स्मरण किया, जो हाथीदाँत तथा स्वर्ण की वनी हुई यज्ञ-वेदी पर वलि चढ़ावे

होंगे। उसे वे नर्तकियाँ, वादक तथा गायक दिखाई पड़े, जो प्रेम एवं सौंदर्य की देवी की स्तुति में गाते-बजाते होंगे। उसने यह सब अपने सम्मुख खड़े पाया और अपने मानस की अनन्त गहराइयों में उनकी गूढ़ता का अनुभव किया।

किन्तु अकेली स्मृति कुछ भी नहीं, वह तो बीते समय की गहराइयों में सुनी आवाज़ों की प्रतिध्वनि मात्र है। तब इन प्रबल उलझी स्मृतियों और एक उस सरल युवक की यथार्थ आप-बीती में यह विषम नाता कैसा, जिसने जन्म तो लिया हो तम्बू में और जीवन का मधुमास घाटियों में रेवड़ चराते बिताया हो?

अली ने अपने आपको संयत किया और खँडहरों में घूमने लगा। कष्टप्रद स्मृतियों ने अचानक ही उसके विचारों पर से विस्मृति के आवरण को चीर दिया। ज्योंही वह कन्दराओं में बने बड़े मन्दिर के प्रवेश-द्वार पर पहुँचा, वह रुक गया, मानो किसी चुम्बकीय शक्ति ने उसे पकड़ लिया हो और उसके पैरों को जकड़ लिया हो। उसने ज्योंही नीचे की ओर देखा, उसे भग्न प्रतिमा पृथ्वी पर पड़ी दिखाई दी। वह एकबारगी अदृश्य की जकड़ से छूट गया। उसकी आत्मा के आँसुओं का बाँध टूट पड़ा और अश्रु इस प्रकार बहने लगे, मानो कि गहरे घाव से रक्त की धार फूट रही हो। उसका हृदय उत्थान एवं पतन में सागर की विशाल लहरों की भाँति गरजने लगा।

उसने एक कड़ुवी आह भरी और दर्दभरी आवाज में वह चिल्ला उठा, क्योंकि उसने अनुभव किया कि दुखद एकांत और विनाशक दूरी उसे उसकी प्यारी प्रियतमा से अलग करने वाली खाई के रूप में विद्यमान है, जो उसके जीवन में पदार्पण करने से पहले ही उससे छिन गई थी। उसे अनुभव हुआ कि उसका आत्मतत्व एक ऐसी अग्नि-शिखा है, जो ईश्वर ने सदियों पहले ही अपने से अलग कर दी थी। उसे अनुभव हुआ कि मुलायम पंखों ने उसे अपनी कोमलता से छुआ है और वे उसके हृदय की ज्वाला के चारों ओर फड़फड़ा रहे हैं तथा यह एक महान् प्रेम के प्रश्रय में है—वह (दिव्य) प्रेम जिसकी शक्ति मन को मान-परिमाण की इस दुनिया से अलग रखती है। प्रेम—जो कि चेतना के मूक हो जाने पर मुखर हो उठता है.. जो एक नीले आकाश-दीप के समान खड़ा रह रास्ते की ओर संकेत भर करता है और अदृश्य प्रकाश के द्वारा ही मार्ग दर्शाता है। उस प्रेम अथवा ईश्वर ने, जिसने अली के हृदय मे उस निःस्वन घड़ी में प्रवेश किया, उसकी सत्ता में एक कटु किन्तु मधुर स्नेह के बीज बो दिए, ऐसे काँटों की तरह, जो विकसित पुष्पों के साथ-साथ बढ़ते जाते हैं।

किन्तु यह प्रेम है क्या ? यह कब आया था ? और यह एक चारवाहे से, जो उन खँडहरों के बीच घुटनों पर सिर धरे पड़ा है, क्या चाहता है ? क्या यह कोई बीज है जो अनजाने

ही किसी रूप-सुन्दरी ने हृदय के राज्य में बो दिया था? अथवा यह कोई रश्मि है जो काले बादलों के पीछे से जीवन को ज्योर्तिमय करने के निमित्त प्रकट हुई है? क्या यह कोई सपना है, जो उपहास करने के हेतु रात्रि को निस्तब्धता में उसके निकट रेंगता रहा है?...अथवा यह कोई सत्य है, जो सृष्टि के आरम्भ से है और अन्त तक रहेगा।

अली ने अपने आँसू-भरे नेत्र मूँद लिये और अपने हाथों को बाहर फैलाकर भिखारी की तरह बड़बड़ाने लगा, "कौन हो तुम, जो मेरे हृदय के इतने पास हो, लेकिन नजर नहीं आते? फिर भी मेरे और मेरी वास्तविक सत्ता के बीच दीवार बनकर खड़े हो और मेरे वर्तमान को विस्मृत भूत (काल) से जोड़े हुए हो?...क्या तुम अनन्त के उस अदृश्य का आभास हो, जो मुझे जीवन के मिथ्याभिमान तथा मानव की दुर्बलता से परिचित करा रहा है? अथवा तुम कोई प्रेतात्मा हो, जो पृथ्वी की दरारों में से निकल कर मुझे गुलाम बनाना चाहती है, और मेरे गिरोह के युवकों के सामने मुझे उपहास-पात्र बनाना चाहती है?.. तुम कौन हो और वह कौन-सी अद्भुत शक्ति है, जो एकसाथ मेरे हृदय को मारती भी है और जिलाती भी?...मैं कौन हूँ, और यह कौन-सी अद्भुत सत्ता है, जिसे मैं 'अहं' कहता हूँ? क्या चेतना की रसधार ने जिसे मैंने पिया है, मुझे एक देवदूत बना दिया है, जो मैं विश्व के रहस्यपूर्ण भेदों को देख-सुन रहा हूँ?

या यह मात्र, एक कुत्सित मदिरा है जिसने मुझे भरमाया है और अपनी सत्ता को पहचानने तक से अन्धा बनाया है ?

वह चुप हो गया, किन्तु उसका चिन्तन बढ़ता गया और उसकी आत्मा अति प्रसन्न होगई। वह फिर बोला, "ओह, जिसे आत्मा प्रकट करती है और रात्रि छिपाये रहती है—ऐसी ए सुन्दर आत्मा—तू तो मेरे स्वप्नों के आकाश में चक्कर लगा रही है। तूने मेरे अन्ततम में, बर्फ के कम्बल तले छिपे हुए स्वस्थ बीजों के समान, एक सुप्त पूर्णता को जगा दिया है। तू अठखेलियाँ करती हुई समीरण के समान मेरे पास से गुजरती है, साथ में दिव्य पुष्पों की सुगन्ध लिये; जो मेरी क्षुधित सत्ता को सुरभित कर देती है। तूने मेरी भावनाओं को छू दिया है, और उनमें हलचल भर दी है। तूने उसे वृक्षों की पत्तियों के समान हिला दिया है। यदि तू एक मनुष्य है, तो अब मुझे अपने को देखने दे, अथवा मुझे निद्रा पर विजय पाने दे, जिससे मैं नेत्र बन्द करके अपनी अन्तरात्मा द्वारा तेरी विशालता को परख सकूँ। मुझे अपने को छूने दे, अपनी वाणी सुनने दे। इस आवरण को चीर के रख दे जो मेरे समस्त ध्येय को छिपाये हुए है और इस दीवार को ढा दे जो मेरे देवता को मुझे देखने से रास्ता रोके खड़ी है। मुझे परों का एक जोड़ा प्रदान कर, जिससे मैं तेरे पीछे सृष्टि के उच्चतम भवनों में जा सकूँ अथवा मेरी आँखों को जादू कर दे जिससे यदि तू किसी प्रेतात्मा की वधु है, तो मैं उन प्रेतों की झोंपड़ियों तक तेरे

साथ चल सकूँ, जहाँ तेरा निवासस्थान है। यदि मैं इस योग्य हूँ तो मेरे हृदय पर हाथ रख दे, और मुझे स्वीकार कर।"

उस रहस्यमय अन्धकार के बीच अली फुसफुसा रहा था कि उसके सम्मुख रात्रि की प्रेतात्मा रेंगती चली आई। ऐसा लगता था कि गर्म-गर्म आँसुओं से भाप उठ रही हो। मन्दिर की दीवारों पर इन्द्रधनुषी कूँची से रंजित जादुई चित्रों की झलक देखी। इस प्रकार अली को आँसू बहाते तथा अपनी दुखित अवस्था पर बड़बड़ाते एक घण्टा बीत गया। वह अपने हृदय की धड़कन सुनता रहा, और दूर लौकिक वस्तुओं के पार देखता रहा, मानो वह चेतना की मूर्तियों को धीरे-धीरे लुप्त होते और उनके स्थान पर अनुपम सौन्दर्यपूर्ण किन्तु पापमय स्वप्नों को आते देख रहा हो: एक उस पैगम्बर की तरह जो इल्हाम (दिव्यवाणी) के लिए आसमानी सितारों की ओर चिन्तापूर्वक घूरता है। वह विचारों से परे की उस सत्ता पर ध्यान लगाये रहा। उसने अनुभव किया कि उसकी आत्मा उसे छोड़ चुकी है और वह उन मन्दिरों में भटकती फिर रही है—सम्भवतः उसकी सत्ता के एक अमूल्य किन्तु अज्ञात भाग को ढूँढ़ती हुई, जो उन खँडहरों में (कहीं) खो गया है।

प्रभात हो चला था और वायु के चलने से निस्तब्धता मुखरित हो रही थी। आकाश के कणों को प्रकाशित करती हुई ज्योति की प्रथम किरणें दौड़ रही थीं, और आकाश एक स्वप्नद्रष्टा की भाँति अपनी प्रेमिका की छाया को देखकर

मुस्करा रहा था। पक्षी अपने घोंसलों से निकल-निकलकर दीवारों की दरारों तथा ऊँची मीनारों वाले भवनों में चहकने लगे थे और प्रातः की प्रार्थनाओं के गाने में लीन थे।

अली ने अपने काँपते हुए हाथ को माथे पर रखा और अपनी चमकती हुई आँखों से नीचे की ओर ताकने लगा। उसने नई और अनोखी वस्तुएँ उसी प्रकार देखीं जिस प्रकार आदम ने परमात्मा से चेतना पाकर सर्वप्रथम आँखें उघाड़ते समय देखी थीं। तब वह अपनी भेड़ों के पास जा पहुँचा और उन्हें एक हाँक दी। वे (भेड़ें) जल्दी से हरे-भरे मैदानों की ओर उसके पीछे हो लीं। वह उन्हें हाँके ले चला; किन्तु आकाश की ओर उस दार्शनिक की तरह सोचता हुआ देखता जाता था, जो विश्व के रहस्यों में डूब गया हो और उनके बारे में सोच रहा हो। वह एक झरने के निकट पहुँचा, जिसकी कलकल ध्वनि आत्मा को शान्ति प्रदान कर रही थी। वह उसी के किनारे सरई के वृक्ष के नीचे बैठ गया, जिसकी शाखाएँ पानी की सतह पर डुबकी लेती हुईं मानो शीतल गहराइयों में से पानी पी रही हों। प्रात: की ओस हरी-हरी घास और फूलों के बीच चरती हुई भेड़ों के बालों पर दमक रही थी।

थोड़ी देर बाद ही अली को फिर लगा कि उसके दिल की धड़कनें तेज हो रही हैं और उसकी आत्मा ने इस तेजी से काँपना आरम्भ कर दिया है; मानो नेत्रों से साफ दिखाई दे रहा हो। जिस प्रकार एक माँ अपने बच्चे की चीख सुनकर एकबारगी

अपनी निद्रा से चौंक जाती है, वह भी अपने स्थान से उछल पड़ा और ज्योंही उसकी दृष्टि एक ओर आकर्षित हुई, उसने देखा कि एक सर्वांग सुन्दरी अपने कन्धे पर एक गागर रखे धीरे-धीरे झरने के उस पार जा रही थी। जब वह किनारे पर पहुँची और गागर भरने के लिए झुकी, उसने उसपर दृष्टि डाली। उसके नयन अली के नयनों से जा टकराये। वह पागल-सी चीख उठी। गागर उसके हाथ से छूट गई और जल्दी से उसने आँखें फेर लीं। तब वह फिर अली की ओर चिंतित एवं क्षुब्ध अविश्वास-भरी नज़रों से देखती हुई मुड़ी। एक मिनट बीता किन्तु उस मिनट के एक-एक क्षण ने उनकी आन्तरिक ज्योतियाँ प्रकाशमान कर दीं और उस नीरवता ने उनकी अस्पष्ट स्मृतियों में कुछ ऐसी प्रतिमाएँ और दृश्य उपस्थित किये, जो उस झरने और वृक्षों से बहुत दूर थे।

उस निस्तब्धता में उन्होंने एक-दूसरे को सुना, आँसुओं में भीगे हुए वे एक-दूसरे के हृदय एवं आत्मा की आवाज़ों को समझते रहे, जबतक कि दोनों एक-दूसरे को पूर्णतः पहचान न पाये।

अली उस समय किसी दिव्यशक्ति के वशीभूत हो झरने को फलाँग गया और युवती के पास जा पहुँचा। उसने उस रूप सुन्दरी का आलिङ्गन किया और एक लम्बा गहरा चुम्बन उसके अधरों पर अंकित कर दिया। मानो अली के आलिङ्गन के मिठास ने उस

युवती की इच्छा पर अधिकार जमा लिया हो, वह किंचिन्मात्र भी हिली न डुली। वास्तव में अली की बाहुओं के मनोहर स्पर्श ने सुन्दरी की शक्ति को चुरा लिया था। जैसे चमेली के पुष्प की सुगन्ध वायु की तरंगों को अंगीकार कर लेती है और विस्तीर्ण नभमण्डल में बह जाती है, वैसे ही उस युवती ने भी अपने को अली में समो दिया।

एक अत्यन्त पीड़ित व्यक्ति के समान, जिसने अब आश्रय पा लिया हो, उसने अपना सिर अली के वक्षस्थल पर धर दिया। उसने एक गहरी आह भरी···एक ऐसी आह, जो एक दुखी हृदय को प्रसन्नता का संदेश सुनाती है, और उन पंखों के फिर उभर आने की क्रान्ति-घोषणा करती है जो कभी घाव खा गये थे- और (जिस कारण) आकाशचारी को धराशायी होना पड़ा था।

युवती ने अपना मस्तक ऊपर उठाया और अपनी आत्म-चक्षुओं से अली की ओर निहारा···यह वह नजरें थीं, जो पूर्ण निस्तब्धता में भी मनुष्य-जाति द्वारा प्रयुक्त शब्दों को तुच्छ बना देती हैं···एक ऐसी वाक्य-शैली, जो हृदय की मूक भाषा में सहस्रों विचार प्रदान करती है। उसकी दृष्टि एक ऐसे व्यक्ति की थी, जो प्रेम को शब्दों के ढाँचे में उत्तेजना-मात्र नहीं समझता, अपितु उन दो आत्माओं का एक पुनःसंयोग समझता है, जो बहुत समय बाद हुआ हो। मानो वे पृथ्वी द्वारा अलग कर दी गई थीं और अब ईश्वर द्वारा मिला दी गई हैं।

भेड़ों का चरना जारी था। आकाश में चिड़ियाँ अब भी उनके सिरों पर चक्कर काट रही थीं और रात्रि की नीरवता का पीछा करती हुई प्रभात के गीत गा रही थीं। जब वह घाटी के अन्त तक पहुँचे तो सूर्य निकल आया था और उसने पहाड़ियों और घाटियों पर स्वर्ण-चादर फैला दी थी। वह एक पत्थर के किनारे पर बैठ गये, जहाँ नील कमल छिपे हुए थे। युवती अली की काली आँखों में झाँक रही थी और वायु के झोंके उसकी लटों के साथ दुलार कर रहे थे। उसे ऐसा अनुभव हुआ मानो उसकी इच्छा के होने पर भी कोई जादू एवं दृढ़ सौम्यता उसके ओठों को छू रही है। एक शांत एवं मधुर स्वर में उसने कहा, "प्रिय! इशतर ने हम दोनों के जीवन का इस पृथ्वी पर पुनः स्थापन किया है,- इसलिए कि हम प्रेम के सुख एवं यौवन की शोभा से वंचित न रहें।"

अली ने अपनी आँखें मूँद लीं, मानो सुन्दरी के संगीतमय स्वर ने उसके सम्मुख उन स्वप्नों के दृश्य ला दिये हों, जो कभी उसने देखे थे। उसे लगा कि पंखों के एक अदृश्य जोड़े द्वारा वह उस स्थान से उड़ाकर वहाँ ले जाया गया है, जहाँ एक शैया पर सुन्दरी का शव लेटा हुआ है और जिसकी सुन्दरता पर मृत्यु ने अधिकार जमा लिया है। वह भय के कारण चिल्ला उठा, तब उसने अपनी आँखें खोल दीं और देखा कि वही सुन्दरी उसी के पास बैठी हुई है और उसके ओठों पर एक मुस्कान फैल गई।

सुन्दरी के नयनों से जीवन की किरणें फूट रही थीं। अली

का चेहरा दमक उठा और उसका हृदय प्रफुल्लित हो गया। उसकी कल्पना का भूत धीरे-धीरे दूर हो गया, और वह अतीत और अतीत के दुःखों को पूर्णतः भूल गया।

दोनों प्रेमी आलिंगन-पाश में बँध गये और वे मीठे चुम्बनों की मदिरा तबतक पीते रहे जबतक कि रस-विभोर नहीं हो पाये। एक-दूसरे के बाहु-पाश में बँधे वे गहरी निद्रा में लीन हो गये और तबतक सोते रहे जबतक दिव्यशक्ति ने, जिसने उन्हें जगाया था, अन्धकार का अन्तिम निशान तक न मिटा दिया।

: ३ :

रात से प्रात तक

१—मेरी आत्मा

शान्त हो जा, मेरे हृदय! क्योंकि वातावरण तेरी पुकारें सुन नहीं सकता और आकाश चीत्कारों और विलापों (के बोझ) से दबा हुआ है। वह भी तेरे गीतों तथा स्तुतियों को वहन नहीं कर सकता।

शान्त हो, क्योंकि रात्रि की छायाएँ तेरे रहस्यों की फुसफुसाहट पर कोई ध्यान न देंगी और ना ही अंधकार के जलूस तेरी कल्पनाओं के सम्मुख आकर रुकेंगे।

शान्त हो जा, मेरे हृदय! कि प्रातः हो जाय, क्योंकि वह जो धैर्यपूर्वक प्रातः की प्रतीक्षा करता है, उससे भेंट करने में अवश्य सफल होता है, और वह जो प्रकाश से प्रेम करता है अवश्य ही उस (प्रकाश) का प्रेम प्राप्त करता है। शान्त हो, मेरे मन, और मेरी कहानी को ध्यानपूर्वक सुन—

मैंने अपने सपने में एक बुलबुल को धधकते ज्वालामुखी के मुहाने पर बैठकर गाते हुए सुना, और एक कुमुदिनी को (मैंने) वर्फ में सर उठाते देखा, और देखा एक अप्सरा को कब्रों के बीच नाचते हुए, एक बच्चे को (मुर्दों के) नरमुण्डों से हँस-हँसकर खेलते हुए!

इन सभी छवियों को मैंने अपने स्वप्न में देखा और जब आँखें खोली, और अपने चारों ओर देखा तो ज्वालामुखी को तब भी धधकते हुए पाया; किन्तु तब बुलबुल न तो गा ही रही थी और न (नभ में) चक्कर लगा रही थी।

मैंने देखा—आकाश घाटियों और मैदानों पर बर्फ फैला रहा है और कुमुदिनी के स्थिर शरीरों को श्वेत कफन के नीचे दाबे जा रहा है।

मैंने देखी—सदियों की निस्तब्धता के सामने कब्रों की एक पंक्ति किन्तु उनके बीच नाचने और स्तवन करनेवाला कोई न था।

मैंने देखा—नरमुण्डों का एक ढेर किन्तु वहाँ हवा के अतिरिक्त कोई भी हँसने को न था।

जब मैं जागा तो मैंने दुःख और यातना को देखा—(आह !) मोदभरे मीठे सपने सब क्या हुए ? ··मेरे सपनों की सुन्दरता कहाँ छिप गई ?···और (वे) मेरी देखी छवियाँ कहाँ विलुप्त हो गईं ?

(मेरी) आत्मा कैसे धैर्य धरे ?—जबतक (वह) मादकता की आशा एवं आकांक्षाओं की सुन्दर छवियों को फिर लौटा न लाये।

मेरे मानस-पटल मेरी बात सुन और मेरी कहानी पर ध्यान दे—

कल (तक) मेरी आत्मा एक पुराने और शक्तिशाली वृक्ष की भाँति थी, जिसकी जड़ें वसुधा की गहराइयों को जकड़े हुए

थीं, और जिसकी शाखाएँ अनंत तक फैली हुई थीं।

वसंत में मेरी आत्मा फूली, ग्रीष्म में उसे फल लगे और जब शरद् ऋतु आई तो मैंने (अपने) फलों को एक चाँदी की तश्तरी में इकट्ठा किया और सड़क के उस ओर रख दिया जिधर से लोग आते-जाते थे। जो भी उधर से गुजरा, उसने इच्छा-पूर्वक (कुछ) फल उठाये और अपनी राह चलता बना।

जब शरद बीत चुका और अपनी प्रसन्नता को रुदन एवं विलाप में डुबो चुका तो मैंने अपनी तश्तरी की ओर देखा। (उसमें) केवल एक फल शेष पाया। मैंने उसे उठा लिया और खाया तो फोड़े के समान कठोर और कच्चे अंगूर के समान खट्टा पाया। तब मैंने अपने आप से कहा, "बुरा हो मेरा, मैं लोगों के मुख में एक अभिशाप और शरीरों में एक व्याधि भरता रहा हूँ। ए मेरी आत्मा, तूने उस मधुर रस का क्या किया जो (तूने) पृथ्वी में से चूसा था, और उस सुगन्ध को कहाँ फेंका जो (तूने) आकाश (में) से संचित की थी?" क्रोध में मैंने अपने पुराने शक्तिशाली पेड़ को नोंच डाला और उसकी प्रत्येक जड़ को पृथ्वी की गहराइयों में से उखाड़ फेंका।

मैंने उसे (आत्मा-रूपी वृक्ष को) उसके भूत (काल) से उखाड़ फेंका और उसकी सहस्रों बहारें व सहस्रों शरद् की स्मृतियाँ छीन लीं। तब मैंने अपनी आत्मा का वृक्ष एक और स्थान पर रोपा। अब वह काल की पहुँच से दूर, एक (निर्जन) मैदान में था। मैंने उसे रात और दिन (एक करके) पाला

तथा अपने से (हमेशा) कहता रहा, "जागरण हमें सितारों के निकट ले जायेगा।"

मैंने उसे अपने रक्त और आँसुओं से सींचा, यह कहकर कि मेरे रक्त में एक स्वारस्य है और मेरे आँसुओं में एक मिठास। जब बहार लौटी तो मेरा वृक्ष फिर से खिल उठा, और फिर ग्रीष्म ऋतु में उसपर फल लगे। जब शरद् आया तो मैंने (अपने) पके हुए फलों को एक सोने की तश्तरी में इकट्ठा किया, और एक जन-पथ पर उसे रख आया। लोग वहाँ से बराबर गुजरते रहे, किन्तु किसी ने भी मेरे फलों को लेना न चाहा।

तब मैंने एक फल उठाया और अपने ओठों से छुआ। वह मधुकोष की भाँति मीठा था, और इतना सुगंधित जैसे चमेली का फूल हो। उसमें इतनी मादकता थी जितनी कि बाबुल की मदिरा में। मैं चिल्ला उठा, "लोग न तो कोई सुखद पदार्थ चखना चाहते हैं और न हृदयों में सत्य धारण करना चाहते हैं; क्योंकि सुख आँसुओं की पुत्री है और सत्य रक्त का पुत्र।"

मैंने कोलाहलपूर्ण नगर को त्याग दिया, जिससे एकान्त में अपनी आत्मा के वृक्ष की छाया में बैठ सकूँ—दूर, जिन्दगी के रास्ते से बहुत दूर!

२—मेरे विचार

शान्त हो जा, मेरे हृदय ! जब तक प्रात न हो जाय। शान्त होकर मेरी कहानी सुन—

कल तक मेरे विचार एक उस नाव के समान थे, जो समुद्र की लहरों के बीच तिर रही हो, और वायु के झकोलों के साथ-साथ एक देश से दूसरे देश को भागी जा रही हो। मेरी नाव तब सतरंगी इन्द्र-धनुष के रंगों से भरे सात मटकों के अतिरिक्त एकदम खाली थी। समय आया; जबकि मैं समुद्र के वक्ष पर घूमता-घूमता ऊब गया और अपने से बोला, "अब मुझे अपने विचारों की खाली नौका को (ही) ले कर अपने उस द्वीप को लौट जाना चाहिए जहाँ मैंने जन्म लिया।"

मैंने तब अपनी नौका को सन्ध्या के समान पीले, जान-ए-बहार की तरह हरे, आकाश के जैसे नीले एवं गहरे गुलाब की तरह लाल रंग से तैयार किया। इसके मस्तूलों एवं पतवारों पर मैंने अनोखे-अनोखे चित्र अंकित किये, जो (देखनेवालों का) ध्यान आकर्षित करते थे और आँखों में चकाचौंध पैदा करते थे। ज्यों ही मैंने यह काम पूरा किया तो मेरे विचार दार्शनिक दृश्यों के समान दिखाई पड़ते थे, (ऐसे दृश्य) जो दो अनंतों—आकाश एवं समुद्र के बीच तैर रहे हों।

तब मैंने अपने जन्मस्थान (के द्वीप) के बन्दरगाह में

प्रवेश किया और लोग गाते-बजाते और खुशियाँ मनाते मुझसे भेंट करने के निमित्त भागे चले आये। जन-समुदाय ने मुझे नगर में प्रवेश करने को आमंत्रित किया। वे लोग अपने वाद्यों को ध्वनित कर रहे थे और खंजरियाँ बजा रहे थे।

यों मेरा स्वागत हुआ; क्योंकि मेरी नौका सुन्दरतापूर्वक सजी हुई थी। परन्तु किसी ने भी भीतर आकर मेरे विचारों की नौका को नहीं झाँका। न ही यह पूछा कि समुद्र के उस पार से मैं क्या-क्या लाया हूँ। वे यह भी न देख पाये कि मैं अपनी नौका को खाली वापस ले आया हूँ; क्यों कि उस (नौका) की चमक-दमक ने उन्हें अन्धा बना दिया था। तब मैंने अपने आप से कहा, "मैंने लोगों को भुलावे में डाल दिया है और रंग के सात मटकों द्वारा उनकी आँखों को धोखा दिया है।"

तत्पश्चात् मैं अपने विचारों की नौका पर फिर से सवार हो गया और पुनः यात्रा के लिए निकल पड़ा। मैं पूर्वी द्वीपों में गया और (वहाँ से) लोबान एवं चन्दन इत्यादि इकट्ठा किया। मैंने पश्चिमी द्वीपो को छान मारा और (वहाँ से) हाथी दाँत, लाल मणि, पन्ने और दूसरे अपूर्व हीरे (इकट्ठे कर) लाया। मैंने दक्षिणी द्वीपों की यात्रा की और वहाँ से अपने साथ सुन्दर कवच, चमकती तलवारें, बरछियाँ और विभिन्न प्रकार के अस्त्रों को लेकर लौटा।

इस प्रकार मैंने अपने विचारों की नौका को पृथ्वी की चुनी हुई एवं अत्यन्त मूल्यवान् वस्तुओं से भर दिया और तब

मैं अपने जन्मद्वीप के बन्दरगाह को लौटा। मैं सोच रहा था कि अब लोग पुनः मेरा गुण-गान करेंगे, और उसमें ईमानदारी होगी। वे लोग फिर मुझे नगर में प्रवेश करने के निमित्त निमंत्रित करेंगे, किन्तु अब योग्यता का आधार होगा।"

परन्तु जब मैं बन्दरगाह पर पहुँचा तो कोई भी (तो) मुझसे भेंट करने को न आया! जहाँ मेरा पहले स्वागत हुआ था उन्हीं सड़कों पर मैं घूमता फिरा; किन्तु किसी व्यक्ति ने मेरी ओर ध्यान तक नहीं दिया! मैं बाजार में खड़ा होकर ज़ोर-ज़ोर से अपनी नौका में भरे हुए खजाने का जिक्र करता रहा; किन्तु वे लोग मेरी खिल्ली उड़ाने लगे और मेरी बातों को किसी ने भी न सुना।

निराशा और व्याकुलता से भरे नीरस हृदय को लिये मैं बन्दरगाह पर लौट आया। और जब मैंने अपनी नौका की ओर दृष्टि डाली तो एक ऐसी वस्तु देखी जिस पर यात्रा के बीच मेरा कभी ध्यान नहीं गया था। मैं आश्चर्यपूर्वक बोला, "सागर की लहरों ने मेरी नौका के रंगों और चित्रों को धो दिया है और देखने में उसे एक ढाँचा-मात्र बनाकर छोड़ दिया है।" आँधी, तूफान, वर्षा और दहकते हुए सूर्य ने (उसकी) छवि को नष्ट कर दिया था और मेरी नौका फटे हुए भूरे वस्त्र की भाँति दिखाई पड़ रही थी। अपने खजाने के बीच से यह सब परिवर्तन मैं न देख सका, क्योंकि मैंने (विचारों के खज़ाने के द्वारा) अन्दर से अपने नेत्रों को अन्धा बना दिया था।

मैंने इस पृथ्वी की अत्यधिक मूल्यवान् वस्तुओं को इकट्ठा किया था, जिन्हें सागर के चेहरे पर तैरते हुए एक वक्षस्थल में संचित किया था। तब मैं अपने लोगों के पास गया, किन्तु उन्होंने मुझे (अपनी) दृष्टि से दूर फेंक दिया, और मुझे पहचान ही न सके; क्योंकि उनकी आँखें खाली (किन्तु) चमकती हुई वस्तुओं द्वारा वशीभूत कर दी गई थीं।

उसी क्षण मैंने अपने विचारों की नौका को त्याग दिया और मृत्युलोक (मजार) की ओर चल पड़ा। वहाँ (मृत किन्तु) सुरक्षित कब्रों के बीच जा बैठा, तथा उनके रहस्यों के बारे में विचार करता रहा।

३—और भोर फूटा

शान्त हो ! मेरे मन, जबतक कि भोर न हो जाय। शान्त बने रहो, क्योंकि क्षुब्ध तूफान तेरी आन्तरिक फुसफुसाहट का उपहास कर रहा है और घाटियों की गुफाएँ तुम्हारे (हृदय के) तारों की आवाज को प्रतिध्वनित नहीं करतीं।

शान्त हो, मेरे हृदय ! जबतक कि सवेरा हो, क्योंकि वह जो धैर्यपूर्वक प्रात के होने की प्रतीक्षा करता है, अरुणोदय उससे प्रेमपूर्वक आलिंगन करता है।

(देखो) भोर फूट रहा है। यदि तू बोल सकता हो तो (अब) बोल, मेरे हृदय ! (देखता है) यही है अरुणोदय का जलूस ! तू बोलता क्यों नहीं ? क्या रात्रि की निस्तब्धता ने तेरे अन्तर में (कोई ऐसा) गीत बाकी नहीं छोड़ा, जिसके

द्वारा तू प्रभात का स्वागत कर सके ?

यह देखो कबूतरों और बुलबुलों के झुण्ड घाटी के दूर छोरों पर दौड़ रहे हैं। क्या तू (इन) पक्षियों के साथ उड़ सकता है, या भयानक रात्रि ने तेरे पंख शक्तिहीन बना दिये हैं ?

बाड़े में से भेड़ों को निकाल कर गड़रिये हाँके लिये जा रहे हैं। क्या रात्रि के भूत ने तुझमें इतनी शक्ति शेष रहने दी है कि तू उनके साथ हरे-भरे मैदानों में दौड़ लगा सके ?

देखो, युवक और युवतियाँ किस शान से अंगूर के बगीचों में टहल रही हैं। क्या तू खड़े होकर उनके साथ घूम सकता है ? उठ, मेरे मन ! और प्रभात के साथ घूम; क्योंकि रात्रि बीत चुकी है और अन्धकार अपने काले सपनों, भयानक भावनाओं और भटकी मंजिलों के साथ अब मिट चुका है !

उठ, मेरे हृदय ! अपने स्वर को संगीतमय बनाकर गा; क्योंकि वह जो प्रभात के संगीत के साथ स्वर-से-स्वर नहीं मिलाता, अनन्त अन्धकार के पुत्रों में से माना जाता है !!

: ४ :

सीरिया का अकाल

[*देश-बहिष्कार के बाद सीरिया के अकाल के समय लिखा गया है*]

मेरे देशवासी मर चुके, किन्तु मैं अब भी जीवित हूँ और (देश से दूर) एकान्तवास में उन (मरनेवालों) का सोग मना रहा हूँ।

मेरे मित्र मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं, और मेरा जीवन उनकी मृत्यु मात्र से एक बृहत् अभाग्य बनकर रह गया है।

मेरे देश की पहाड़ियाँ आँसू और रक्त मे डूबी हुई हैं, क्योंकि मेरे लोग और मेरे प्रिय (इस संसार से) उठ चुके हैं, और मैं यहाँ उसी प्रकार जीवित हूँ जैसे कि मैं तब था जब मेरे लोग और मेरे प्रिय बंधु जीवन और जीवन की उदारता का आनन्द लूट रहे थे, और जब मेरे देश की पहाड़ियाँ सूर्य के प्रकाश में प्रसन्न एवं सम्पूर्णतः डूबी रहती थीं।

मेरे देशवासी भूखे मर गये, और वह जो क्षुधा से पीड़ित हो न मरा, तलवार के घाट उतार दिया गया। और मैं हूँ कि यहाँ इस दूर देश में उन सम्पन्न लोगों में भटक रहा हूँ, जो कोमल गद्दों पर सोते हैं और (अपने अच्छे) दिनों पर हँसते हैं, जबकि समय भी उनके अनुकूल है।

मेरे देशवासी एक यातनामय एवं लज्जाजनक मौत मरे, और मैं (यहाँ) समृद्धि एवं शान्ति के बीच रह रहा हूँ···, यह अत्यन्त शोकपूर्ण नाटक है, जो (इससे) पहले कभी मेरे हृदय के रंगमंच पर नहीं खेला गया। बहुत कम होंगे, जो इस नाटक को देखने की परवाह करेंगे, क्योंकि मेरे देशवासी तो (अब) एक ऐसे पक्षी के समान हैं, जिसके पर टूट चुके हैं और जो अपने साथियों से पिछड़ चुका है।

यदि मैं (भी) भूखा होता और अपने क्षुधा-पीड़ित लोगों के साथ रहता होता, एवं ठुकराये गये अपने देशवासियों के साथ दुःख भोगता तो मेरे अशान्त सपनों में दुःखभरे दिनों का बोझ कुछ हलका हो जाता, और मेरी गड्ढे में धँसी आँखों, चीखते हुए हृदय एवं आहत आत्मा के सम्मुख रात्रि की गूढ़ता (कुछ) कम अन्धकारमय हो जाती। क्योंकि वह, जो अपने देशवासियों के साथ दुःख एवं यातनाएँ भोगता है, एक महान् आनन्द का अनुभव करता है। (ऐसा आनन्द) जो आत्म-त्याग में कष्ट भोगने स ही प्राप्त हो सकता है, और उसे वह आन्तरिक शान्ति प्राप्त होती है, जो अपने अन्य निर्दोष भाइयों के साथ निर्दोष की मौत मरने में प्राप्त होती है।

किन्तु मैं अपने भूखे और पीड़ित भाइयों के बीच नहीं रहा, जो मृत्यु के जलूस बना-बना कर बलिवेदी की ओर जा रहे हैं। मैं···मैं तो विस्तीर्ण सागर के इस पार आनन्द की छाया एवं शान्ति के प्रकाश में जी रहा हूँ, मैं (उस) करुण

और मेरी बाहुओं में नश्तर चुभोती रहती है। उसने मेरी शक्ति, इच्छा और आचरण पर अन्यायपूर्वक अधिकार जमाया हुआ है। यह एक अभिशाप है, जो ईश्वर और मनुष्य के सम्मुख मेरे भाल पर धधक रहा है।

कभी-कभी वे मुझसे कहते हैं, "तुम्हारे देश का यह दुःख संसार भर की पीड़ा के सम्मुख कुछ भी नहीं है, और देशवासियों के (ये) आँसू और रक्त उन आँसुओं एवं रक्त की नदियों के सामने कुछ भी नहीं हैं जो दिन और रात पृथ्वी भर के मैदानों एवं घाटियों में से वह रही हैं।"

ठीक है, किन्तु मेरे देशवासियों की मृत्यु तो एक मूक अभियोग है। यह तो एक अपराध है; जिसे अदृश्य अहिमुख दैत्य (मनुष्य) पर कर रहे हैं यह तो गीत एवं दृश्यों से विहीन एक दुःखान्त नाटक है!

अगर मेरे देशवासियों ने निर्दयी एवं अत्याचारी (राज्य-संचालकों) पर आक्रमण किया होता और विद्रोहियों की मौत मरे होते, तो मैं कहता, "स्वतन्त्रता के लिए मर जाना दीन समर्पण की छाया में जीने से कहीं अच्छा है। क्योंकि वह, जो हाथ में सत्य की तलवार लेकर मृत्यु का आलिंगन करता है, अमर सत्य के साथ अमरत्व को प्राप्त होता है; क्योंकि जीवन मृत्यु से हीन है और मृत्यु सत्य के सामने कुछ भी नहीं।"

यदि मेरे देश ने विश्व-युद्ध में भाग लिया होता और युद्ध-क्षेत्र में मृत्यु को प्राप्त होता, तो मैं कह सकता था, "बढ़ते हुए

तूफान ने अपनी शक्ति द्वारा हरी पत्तियों को तोड़ डाला है, और तूफान की छत्रच्छाया में बहादुरी की मौत, बुढ़ापे की बाहुओं में (पड़कर) धीरे-धीरे नष्ट होने से कहीं श्रेष्ठ है।"

किन्तु (मृत्यु के) बन्द होते जबड़ों से उद्धार (पाने) के लिए कोई रास्ता ही नहीं था···मेरे देशवासी घुटनों के बल गिर पड़े और चीखती हुई अप्सराओं के साथ रोते रहे।

यदि एक भूकम्प मेरे देश को हिलाकर टुकड़े-टुकड़े कर डालता और पृथ्वी मेरे देशवासियों को अपनी कोख में समो लेती तो मैं कह सकता था।

'ईश्वरीय (शक्ति की) इच्छा द्वारा एक विचित्र एवं रहस्यमय विधि-विधान हरकत में आया है और यह निरी मूर्खता होगी यदि हम (नश्वर मनुष्य) उसके गहन रहस्यों को जानने की इच्छा करें।'

किन्तु, मेरे देशवासी न तो विद्रोहियों की मौत मरे, न वे रणक्षेत्र में काम आये, और ना ही भूकम्प ने मेरे देश को छिन्न-भिन्न कर दिया। मृत्यु ही उनका उद्धार करने वाली थी और मात्र भूख ही उनकी जानलेवा!

× × ×

मेरे देशवासी तड़प-तड़प कर मर गये उनके हाथ पूर्व एवं पश्चिम (के देशों) की ओर फैले हुए थे। वे मरे—जब कि उनकी आँखों के अवशेष आकाश के अन्धकार को घूर रहे थे। वे चुपचाप मर गये, क्योंकि मनुष्यता ने उनकी चीख-पुकार के लिए अपने कान बन्द कर लिये थे। वे मरे, क्योंकि

उन्होंने अपने शत्रुओं का साथ न दिया। वे मरे, क्योंकि वे अपने पड़ोसियों से प्रेम करते थे। वे मरे, क्योंकि उन्होंने मानवता पर भरोसा किया। वे (इसलिए) मरे, क्योंकि अत्याचारी पर उन्होंने अत्याचार नहीं किया। वे (इसलिए) मरे, क्योंकि वे पैरों से कुचले फूल थे, न कि कुचलने वाले पैर। वे (इसलिए) मरे, क्योंकि वे शान्ति स्थापित करना चाहते थे। दूध-दही से भरे-पूरे देश में वे भूख से तड़प-तड़प कर मर गये। वे (इसलिए) मरे, क्योंकि जो भी उन्होंने अपने खेतों में उत्पन्न किया, यमदूतों ने वह सब नष्ट कर डाला और उनकी खत्तियों में अनाज के अंतिम कण तक को चट कर डाला, वे मेरे सीरिया निवासी भाई (इसलिए) मरे, क्योंकि विषैले साँपों ने उस वातावरण में विष उगल दिया था, जहाँ पवित्र देवदार, गुलाब एवं कुमुदिनी के दृश्य अपनी साँसों द्वारा सौरभ फैला रहे थे।

सीरिया-निवासी मेरे भाई, मेरे और तुम्हारे देशवासी मर चुके हैं और जो मर रहे हैं, उनके लिए क्या किया जा सकता है? हमारे विलाप उनकी क्षुधा को शान्त नहीं कर सकते और हमारे आँसू उनकी प्यास बुझा नहीं सकते। हम भला क्या कर सकते हैं जो उन्हें क्षुधा के कठोर चंगुल से मुक्त करें?

(किन्तु) मेरे भाई, (यह) दयालुता ही, जो तुम्हें विवश करती है कि तुम अपने जीवन का एक भाग किसी भी ऐसे मनुष्य की सेवा में अर्पित कर दो जो जीवन से निराश हो चुका है,

केवल एक ऐसा गुण है, जो तुम्हें दिन के प्रकाश एवं रात्रि की शान्ति (पाने) का अधिकारी बनाता है।

याद रखो, मेरे भाई! वह सिक्का, जो तुम उस मुर्झाए हाथ पर धरते हो, जो तुम्हारे सम्मुख फैला हुआ है, एक ऐसी सोने की जंजीर है जो तुम्हारे धनी हृदय को ईश्वर के प्रेममय हृदय से बाँधती है।

: ५ :

मुर्दों के बीच

रात का भयानक सन्नाटा था। घने बादलों के गहरे आवरण के पीछे चाँद और सितारे छिप गये थे और मैं अकेला भयभीत मृत-प्रेतों की घाटी में घूम रहा था।

आधी रात बीती तो डरावने और रीढ़दार परों वाले पिशाच मेरे चारों ओर उछलने लगे और मैंने एक महाकाय भूत को अपने सम्मुख खड़ा पाया, जो अपनी मायावी भयंकरता से मुझे बेसुध कर रहा था। गरजते हुए स्वर में उसने कहा, "तुम्हारा भय दोहरा है! तुम मेरे भय से भयभीत हो, परन्तु तुम इसे छिपा नहीं सकते; क्योंकि तुम मकड़ी के बारीक धागे से भी अधिक निर्बल हो। ए! तुम्हारा सांसारिक नाम क्या है?"

एक विशाल चट्टान का सहारा ले मैंने अपने आपको इस आकस्मिक आघात से सँभाला और एक बीमार की-सी काँपती हुई आवाज में उत्तर दिया, "मेरा नाम अब्दुल्ला है, जिसका अर्थ है ईश्वर का दास।" कुछ क्षण के लिए वह मूक बना रहा, एक भयानक चुप्पी साधे! मैं उसकी आकृति से परिचित-सा हो गया। किन्तु उसके विलक्षण विचारों, शब्दों तथा उसके अद्भुत विश्वासों व भावनाओं को जान मै एक बार फिर काँप उठा।

(तब) वह गड़गड़ाया, "ईश्वर के दास अनेकों हैं और ईश्वर को अपने दासों के कारण महान् दुःख है। तुम्हारे पिता ने

तुम्हारा नाम उलटे असुर-स्वामी क्यों न रख दिया ? ताकि इस धरती के बहुत बड़े संकट में एक और विपत्ति बढ़ जाती। तुम भयभीत होकर अपने पूर्वजों द्वारा दिये गए उपहारों के घेरे से चिपके रहते हो और तुम्हारी पीड़ा के कारण होते हैं तुम्हारे माता-पिता के वसीयतनामे। और तुम तबतक मृत्यु के गुलाम बने रहोगे जबतक कि तुम मृत (पुरुषों) में मिल नहीं जाओगे !

"तुम्हारे (सभी) कार्य निस्सार एवं शून्य हैं और तुम्हारे जीवन खोखले ! वास्तविक जीवन से तुम्हारी कभी भेंट नहीं हुई, और न होगी, और न ही तुम्हारा प्रवंचक अस्तित्व तुम्हारे जीते जी मरण का अनुभव पा सकेगा। तुम्हारी भ्रामक दृष्टि लोगों को जिन्दगी के तूफान को सामने काँपते हुए देखती है और तुम समझते हो कि वह जीवित हैं; जबकि वास्तव में वे तभी से मरे हैं जबसे उन्होंने जन्म लिया है। हाँ ! उन्हें दफनानेवाला कोई न था। अब तुम्हारे लिए एक अच्छा व्यवसाय है और वह है कब्र खोदने का। इस प्रकार तुम थोड़े से जीवित लोगों को इन (जिन्दा) लाशों से मुक्त कर सकते हो, जो (उनके) घरों, सड़कों एवं मन्दिरों के चारों ओर ढेरों पड़ी हैं।"

मैंने विरोध किया, "मैं ऐसा व्यवसाय नहीं अपना सकता। मेरी पत्नी और बच्चों को मेरा सहारा और साथ चाहिए।"

वह अपने घने बालदार पुट्ठों को, जो बलूत के पेड़ को पुष्ट जड़ों-जैसे प्रतीत होते थे, दिखाता हुआ तथा जीवन और शक्ति में उमड़ता हुआ मेरी ओर झुका और यों चिंघाड़ने लगा, "प्रत्येक

(व्यक्ति) को एक फावड़ा दो और उसे कब्र खोदना सिखाओ; तुम्हारा जीवन और कुछ नहीं बस एक घनी व्यथा है, जो सफेद पलस्तर की हुई दीवार के पीछे छिपा हुआ है।

"हममें मिल जाओ, क्योंकि हम पिशाच ही वास्तविकता के स्वामी हैं। कब्रें खोदना धीमे-धीमे सही, किन्तु निश्चित लाभ लाता है और उन मृत कीड़ों को, जो तूफान में काँपते रहते हैं किन्तु उसके साथ दौड़ नहीं लगा सकते, समाप्त कर देता है।" उसने कुछ सोचा और तब पूछा, "तुम्हारा धर्म क्या है ?"

मैंने साहसपूर्वक बताया, "मैं ईश्वर में विश्वास रखता हूँ और उसके पैगम्बरों का आदर करता हूँ। मैं सदाचार से प्रेम करता हूँ और अनन्तता में मेरी आस्था है।"

विलक्षण बुद्धि एवं दृढ़ विश्वास से उसने उत्तर दिया, "मानवी ओंठों पर ये खोखले शब्द-ज्ञान ने नहीं, अपितु अतीत ने रख दिये हैं और तुम...तुम वास्तव में मात्र स्वयं में विश्वास करते हो और अपने आपको छोड़कर और किसी का आदर नहीं करते। तुम्हें केवल अपनी अभिलाशाओं की अनन्तता ही में विश्वास है। आरम्भ से अबतक मनुष्य ने अपने आपको समुचित नाम दे-देकर पूजन किया है, और अब 'ईश्वर' शब्द का तात्पर्य भी वह 'स्वयं' ही लेता है।" तब वह महाकाय भूत भीषण ठहाका मारकर हँसा, जिसकी प्रतिध्वनि खोखली गुफाओं में गूँजने लगी, और उलाहना देकर उसने कहा, "वे (मनुष्य) कितने अद्भुत जो अपने-आपकी ही पूजा करते हैं और (फिर)

जिनका वास्तविक अस्तित्व मिट्टी के लोथ के सिवा कुछ भी नहीं है।"

वह तनिक रुका। मैंने उसके कथन पर विचार किया और उसके अर्थ को सोचा। (तब मैंने पाया कि) वह उस ज्ञान का स्वामी था जो जीवन से अधिक विलक्षण तथा मृत्यु से अधिक भयानक एवं सत्य से भी अधिक गहरा था। डरते हुए मैंने साहस करके पूछा, "क्या तुम्हारा भी कोई धर्म अथवा परमात्मा है ?"

"मेरा नाम पागल परमात्मा है" उसने उत्तर दिया, "हमेशा मेरा जन्म होता रहा है और मैं अपनी सत्ता का स्वयं परमात्मा हूँ। मैं बुद्धिमान नहीं हूं, क्योंकि बुद्धिमत्ता निर्बलता का लक्षण है। मैं शक्तिशाली हूँ, और मेरे पैरों के संकेत से धरती घूमती है। जब मैं रुकता हूँ तो सितारों का जलूस भी मेरे साथ रुक जाता है। मैं लोगों पर हँसता हूँ, रात्रि के दानवों के साथ मैं घूमता हूँ। पिशाचों के महान सम्राटो के साथ मेरा मेल-जोल है। जीवन एवं मरण के रहस्यों पर मेरा अधिकार है।

"प्रातः मैं सूर्य की निन्दा करता हूँ, मध्याह्न को मैं मनुष्यता को कोसता हूँ; सन्ध्या के समय मैं प्रकृति को नष्ट करनें के लिए विचार करता हूँ और रात्रि मे मैं घुटने टेक कर स्वय का पूजन करता हूँ। मैं कभी नहीं सोता, क्योंकि मैं कालात्मा हूँ, विशाल 'समुद्र' और 'अहं तत्त्व।' मैं मानव-शरीर का भोजन करता हूँ, उनके रक्त का पान करके अपनी प्यास बुझाता हूँ और उनके मरण-श्वास का अपने प्राण-वायु

के रूप में प्रयोग करता हूँ। यद्यपि तुम अपने को छलते हो किन्तु तुम मेरे भाई-बन्धु हो, और तुम मेरी तरह ही तो रहते हो ! परे हटो पाखण्डी ! जाओ घिसटते हुए वापस धरती को चले जाओ, और जीवित मुर्दों के बीच अपने आप की पूजा करते रहो।"

सुध-बुध खोनेवाली उस घबराहट में मैं पथरीली एवं गुफाओं से भरी घाटी पर से नीचे लुढ़कने लगा। जो कुछ मेरे कानों ने सुना था और आँखों ने देखा था उसपर मुझे विश्वास नहीं आ रहा था। उसकी कही हुई कुछ सचाइयों की पीड़ा के कारण मैं फटा जा रहा था; और खिन्न विचारों में डूबा हुआ मैं सारी रात मैदानों में घूमता रहा।

× × ×

मैंने एक फावड़ा ले लिया और अपने-आपसे कहा, "कब्रों को गहरा खोदो···जाओ और जहाँ कहीं भी तुम्हें जीवित मुर्दों में से कोई मिल जाय उसे धरती में दफना दो।"

उस दिन से मैं कब्रें खोद रहा हूँ और जीवित मुर्दों को दफना रहा हूँ। किन्तु जीवित मुर्दे अनेक हैं और मैं अकेला, और न ही मेरा कोई सहायक है।

: ६ :

मुर्दों के नगर में

कल मैंने अपने-आपको नगर के कोलाहल से मुक्त कर लिया और मैं निर्जन मैदानों में तबतक चलता रहा जबतक मैं उन ऊँचे शिखरों तक न पहुँचा, जिन्हें प्रकृति ने अपनी रुचि के उत्तम वस्त्रों से ढँका है।

वहाँ मैं खड़ा हो गया और नीचे बसे उस नगर को मैंने देखा, जिसमें ऊँचे भवन एवं सुन्दर महल कारखानों से निकलते हुए धुएँ के घने बादलों के नीचे ढके हुए थे। तब मैं वहाँ बैठ गया और दूर से मनुष्य के कार्यों का निरीक्षण करने लगा। मैंने देखा कि वह दुखी और मजबूर है। जो कुछ मनुष्य कर चुका है उसे हृदय से निकालने का मैंने प्रयत्न किया और अपनी दृष्टि मैदान की ओर फेर ली, जो ईश्वर की भव्यता का सिंहासन है। वहाँ मुझे एक कब्रिस्तान दीखा जहाँ सरो के वृक्षों से घिरे पत्थरों के स्मारक थे।

इस प्रकार मैं जीव-लोक और मृत्यु-लोक के बीच बैठकर सोचता रहा। एक ओर अनंत (आपसी) कलह तथा निरंतर गति—दूसरी ओर मूकता का राज्य एवं शान्ति का निवास। इधर आशा-निराशा, प्रेम-घृणा, सम्पन्नता-निर्धनता, विश्वास-अविश्वास और उधर प्रकृति द्वारा पृथ्वी की मिट्टी उलटी हुई,

जिसमें से रात्रि की निस्तब्धता में ही प्रथम पौधा फूटा और फिर जीव का जन्म हुआ।

जब मैं इन विचारों में खोया हुआ था, मेरी दृष्टि एक पैदल चलते जन-समूह पर पड़ी, जिसके आगे-आगे संगीत बजता जाता था और जिसके अन्तिम शब्द वायुमंडल को दुःख से भरे दे रहे थे। वह ठाठ-बाट का एक विशेष जलूस था, जिसमें सभी प्रकार के लोग सम्मिलित थे। वह थी एक धनी एवं शक्तिशाली की अर्थी! शव के पीछे-पीछे कुछ लोग थे जो वायु-मंडल को अपने विलाप एवं क्रंदन से पूरते जा रहे थे।

जलूस कब्रिस्तान में पहुँच गया। पुरोहितों ने सुगंधित धूप जलाई, (ईश्वर से) प्रार्थनाए कीं और संगीतज्ञों ने वाद्य बजाये। दूसरे लोगों ने भाषण दिये और सुन्दर शब्दों में दिवंगत आत्मा की प्रशंसा की। कवियों ने उत्तमोत्तम पदों में मातमी गीत सुनाये। इस सबमें काफी समय लग गया और लोग थक गये। कुछ समय पश्चात् सारी मण्डली उस कब्र को छोड़कर चल दी, जिसके निर्माण में शिल्पकारों तथा राजों में स्पर्धा उत्पन्न हो गई थी। उस कब्र के चारों ओर कलापूर्ण हाथों द्वारा चतुराई से फूल सजाये गये थे। तब नौकर-चाकरों का समूह नगर की ओर लौट चला; जबकि मैं दूर से बैठा हुआ देखता रहा और सोचता रहा।

सूर्य पश्चिम की ओर चल पड़ा, वृक्षों और चट्टानों की परछाइयाँ लम्बी होती गईं और प्रकृति ने अपने प्रकाश-रूपी

वस्त्रों का उतारना आरम्भ कर दिया।

उसी क्षण मैंने दो पुरुषों को लकड़ी का ताबूत उठाये हुए (लाते) देखा। उनके पीछे बच्चे को दूध पिलाती, फटे-चीथड़े पहने एक स्त्री चली आ रही थी। उसी के साथ तेज चाल से एक कुत्ता चल रहा था, जो कभी उस (स्त्री) की ओर और कभी ताबूत की ओर देख रहा था। यह किसी निर्धन एवं विनीत व्यक्ति की अर्थी थी। दुःख के आँसू बहाती उसकी पत्नी जा रही थी। अपनी माँ को रोते देखकर रोता हुआ एक बच्चा और एक स्वामि-भक्त कुत्ता, जिसके हर कदम से दुःख और सन्ताप झलक रहा था, साथ-साथ जा रहे थे।

वे कब्रिस्तान पहुँच गये और उन्होंने ताबूत को एक कब्र में लिटा दिया, जो संगमरमर की बनी कब्रों से बहुत दूर थी। तब वह चुपचाप वापस लौट आये। किन्तु वह कुत्ता बार-बार लौट-कर अपने साथी के अन्तिम विश्राम-स्थान की ओर देखता रहा। इस प्रकार वे वृक्षों की ओट में आँखों से ओझल होगये।

मैं जीव-लोक की ओर देखता हुआ अपने-आपसे बोला, "वह नगर तो धनी एवं शक्तिशालियों का है।" और मृत्युलोक को देखकर मैं बोला, "यह भी तो धनिकों तथा बलवानों का ही नगर है। तो फिर ईश्वर! निर्धन एवं निर्बल का घर कहाँ है?"

मैंने अपनी दृष्टि बादलों की ओर फेरी। उन बादलों की ओर जिनके छोर अस्त होते सूर्य की सुनहरी किरणों से रंगीन हुए थे, और मेरे अन्तस्तल में से एक आवाज़ आई—"वहाँ!"

: ७ :

दुःख के गीत

जनता के दुःख दाँत की विकट पीड़ा के समान हैं और समाज के मुँह में ऐसे कई गले-सड़े तथा रोगी दाँत हैं; किन्तु समाज सावधानी से एवं धैर्यपूर्वक उनकी चिकित्सा नहीं करता। उलटे बाहरी चमक-दमक द्वारा तथा चमचमाते एवं देदीप्यमान सोने के मुलम्मे से, जो नेत्रों को दूर से (दाँतों की) खराबी के बारे में अन्धा बना देता है, स्वयं को सन्तुष्ट कर लेता है। किन्तु अपने आपको निरन्तर पीड़ा से रोगी तो अनभिज्ञ नहीं रख सकता।

सामाजिक दन्त-रोगों के कई चिकित्सक हैं, जो संसार में से पाप-रूपी दन्त-रोग को सौन्दर्य के भराव-मात्र उपचार से दूर करने का प्रयत्न करते हैं और बहुत-से रोगी ऐसे हैं जो समाज-सुधारकों की इच्छाओं पर चलते हैं और इस प्रकार अपने दुःखों को और भी बढ़ा लेते हैं। इस प्रकार अपनी क्षीण होती शक्ति को और भी कम कर बैठते हैं और अपने आपको छलकर अधिकाधिक निश्चित रूप से मृत्यु की घाटी की ओर घसीटे ले चलते हैं।

सीरिया के सड़े-गले दाँत उसकी पाठशालाओं में पाये जाते हैं, जहाँ आज के युवक को कल का कष्ट-भोगी बनाना सिखाया जाता है; वे उसके न्यायालयों में हैं, जहाँ न्यायाधीश

कानून को तोड़ते-मरोड़ते हैं और उससे ऐसे खुल खेलते हैं जैसे एक शेर अपने शिकार के साथ खेलता है, उसके राजभवनों में हैं जहाँ मिथ्या एवं पाखण्ड का राज्य है, और गरीबों की झोंपड़ियों में है, जहाँ भय, अज्ञान एवं भीरुता का निवास है।

कोमल उँगलियोंवाले राजनतिक (दंत चिकित्सक) लोगों के कानों में यह चिल्ला-चिल्लाकर कहते हुए शहद उँडेलते हैं कि वे राष्ट्रीय निर्बलता के छिद्रों को पूर रहे हैं। उनका गीत चलती चक्की के स्वर से भी अधिक ऊँची आवाज में सुनाया जाता है, किन्तु वास्तव मे वह गंदे तालाव में टर्राते हुए मेंढक की आवाज-सी भी नहीं होता।

✓इस खोखले संसार में अनेक विचारक एवं आदर्शवादी हैं! उनके स्वप्न कितने धुँधले हैं!

× × ×

सौन्दर्य यौवन की सम्पत्ति है। किन्तु यौवन, जिसके लिए ही (इस) संसार की रचना हुई थी, एक ऐसे स्वप्न के सिवा कुछ भी नहीं जिसका माधुर्य उस अज्ञानता का दास है, जो उसे बहुत देर बाद जगने देती है। क्या ऐसा भी कभी समय आयेगा जब बुद्धिमान लोग यौवन के मधुर स्वप्नों तथा ज्ञान के हर्ष को एक साथ बाँध देंगे? प्रत्येक का अलग-अलग अस्तित्व तो नगण्य है। क्या वह भी दिन कभी आयेगा जब प्रकृति मनुष्य को शिक्षक, मानवता उसकी धर्म-पुस्तक और जीवन उसकी दैनिक पाठशाला होगी।

यौवन का उद्देश्य हर्ष—आनन्द के उपयुक्त और दायित्व में नम्रतापूर्ण—तबतक पूरे तौर से प्राप्त नहीं हो सकता जबतक ज्ञान से दिन का सवेरा घोषित न हो।

ऐसे अनेक पुरुष हैं जो अपने यौवन के बीते दिनों को द्वेष-पूर्वक कोसते हैं और ऐसी बहुत-सी स्त्रियाँ हैं, जो अपने व्यर्थ गये वर्षों से उस क्रुद्ध शेरनी की भाँति, जिसके बच्चे खो गये हों, घृणा करती हैं और अनेक ऐसे युवक एवं युवतियाँ भी हैं, जो अपने हृदयों में भविष्य की कटार-रूपी स्मृतियों को छिपाये रखते हैं और अपने आपको अनजाने में ही हर्ष-विहीनता के तीखे एवं विषैले बाणों से घायल करते रहते हैं।

बुढ़ापा धरती का बर्फ है। इसे प्रकाश एवं सत्य के द्वारा अपने नीचे बसे यौवन के बीजों को गर्मी पहुँचाकर सुरक्षित रखना चाहिये एवं इनका प्रयोजन पूरा करना चाहिये ताकि निसान[1] आये और यौवन के उगते हुए पवित्र जीवन को नव-जागरण द्वारा पूर्णतया विकसित करे।

हम अपने आत्मिक उत्थान की ओर बहुत धीरे-धीरे बढ़ रहे हैं और केवल वही तल जो नभमंडल की तरह अनन्त है, सुन्दरता के प्रति हमारे अनुराग एवं प्रेम द्वारा हमें जीवन के सौन्दर्य का बोध कराता है।

× × ×

---

[1] यहूदियों के 'अबीब' नामक मास को हिब्रू भाषा में 'निसान' कहते हैं।

भाग्य मुझे आधुनिक संकीर्ण सभ्यता के दुःखपूर्ण प्रवाह में बहा ले चला और प्रकृति की भुजाओं से छीन उसके शीतल कुञ्जों से निकालकर उस (भाग्य) ने मुझे कठोरतापूर्वक जन-समुदाय के चरणों में जा पटका, जहाँ मैं नगर की यातनाओं का शिकार बना हुआ हूँ।

किसी भी ईश्वर-पुत्र को इतना कड़ा दण्ड नहीं मिला होगा। किसी भी ऐसे मनुष्य के भाग्य में इतना विकट देश-निकाला न लिखा होगा जो पृथ्वी के एक तिनके से भी इतने उत्साह से प्रेम करता है कि उसके अस्तित्व का प्रत्येक तन्तु काँप उठता है। किसी भी अपराधी पर लगाये गये बन्धन मेरी क़ैद के संताप के सम्मुख कुछ भी न होंगे; क्योंकि मेरी कोठरी की संकीर्ण दीवारें मेरे हृदय को कुचल रही हैं।

भले ही हम स्वर्ण-अशर्फियों की दृष्टि से ग्रामवासियों से अधिक धनी हैं, किन्तु वे यथार्थ जीवन की पूर्णता में (हमसे) कहीं अधिक धनी हैं। हम प्रचुर मात्रा में (बीज) बोते हैं, किन्तु पाते कुछ भी नहीं और वे प्रकृति-प्रदत्त श्रेष्ठ एवं उदार पारितोषिक पाते हैं, जो ईश्वर के परिश्रमी बच्चों को प्रकृति देती है। हम हेर-फेर के व्यापार में धूर्त्तता से काम लेते हैं, और वे प्रकृति की उपज को शान्ति एवं निष्कपटता से ग्रहण करते हैं। हम भविष्य के पिशाचों को देखते हुए बेचैनी की नींद सोते हैं, और वे माँ की गोद से चिपटे हुए बच्चे के समान निद्रा-निमग्न होते हैं; क्योंकि वे जानते हैं कि प्रकृति कभी भी अपनी अभ्यस्त उपज

देना स्वीकार न करेगी।

हम लाभ के दास हैं और वे सन्तोष के स्वामी हैं। हम जीवन के प्याले में से कडुआहट, निराशा, भय एवं थकान का पान करते हैं और वे ईश्वर के आशीर्वादों का स्वच्छतम अमृत पीते हैं।

हे अनुग्रह करनेवाले (परमात्मा)! इन मीनारों के पीछे, जो मूर्तियों एवं प्रतिबिम्बों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं, तू जो मुझसे छिप गया है, मेरी कैदी आत्मा की विलापपूर्ण पुकार सुन तथा मेरे फटते हुए हृदय का संताप सुन! मुझपर दया कर और अपने (इस) भटकते हुए बच्चे को उन पर्वतों की ओर वापस ले चल, जहाँ तेरा अपना घर है!!

: ८ :

एक आँसू ; एक मुस्कान

अनेकों की प्रसन्नताओं से भी मैं अपनी मनोव्यथाओं को नहीं बदलूँगा और न ही मैं उन आँसुओं को, जो मेरे प्रत्येक अंग से संताप वहा ले जाते हैं हँसी में वदलना चाहूँगा। मैं तो यही चाहूँगा कि मेरा जीवन एक आँसू और एक मुस्कान ही बना रहे।

एक आँसू जो मेरे हृदय को पवित्र करके जीवन के रहस्यों एवं गुप्त विषयों से मेरा बोध करा दे। एक मुस्कान जो मुझे अपनी जाति के पुत्रों के समीप लाये और जिससे मैं देवताओं की भव्यता का प्रतिरूप बन जाऊँ।

एक आँसू जो मुझे निराश लोगों से मिला दे, और एक मुस्कान जो मेरे जीवन में हर्ष का प्रतीक बन जाय।

एक थके-हारे एवं निराश जीवन की अपेक्षा मैं उत्सुक एवं आकांक्षी रहकर मर जाना चाहूँगा।

अपनी आत्मा की गहराइयों में उतरने के लिए मैं प्रेम और सौन्दर्य की भूख चाहता हूँ, क्योंकि मैंने उन लोगों को, जो सन्तुष्ट रहते हैं, अत्यन्त दुखी पाया है। मैंने उत्कंठित एवं आकांक्षी लोगों की आहें सुनी हैं और उन्हें मधुरतम लय से भी मीठा पाया।

सन्ध्या होती है तो पुष्प अपनी पत्तियों को समेट लेता है

और अपनी इच्छाओं को गले लगाकर सो जाता है। भोर होते ही वह सूर्य का चुम्बन पाने के लिए अपने अधरों को खोल देता है।

पुष्प का जीवन है आकांक्षा और उसकी पूर्ति एक आँसू और एक मुस्कान।

सागर का जल वाष्प बनता है, ऊपर उठता है, इकट्ठा होता है और मेघ बन जाता है, मेघ पहाड़ियों एवं घाटियों के ऊपर मँडराता रहता है जबतक कि उसकी भेंट मन्द पवन से नहीं हो जाती। तब वह विलाप करता हुआ (आँसु बनकर) खेतों और खलिहानों पर गिर पड़ता है और अपने घर—सागर को लौटने के लिए नदियों और नालों से जा मिलता है।

मेघ का जीवन एक वियोग और संयोग है बस—एक आँसू और एक मुस्कान!

इसी प्रकार आत्मा भौतिक संसार में विचरने के हेतु विशाल आत्मा (ईश्वर) से बिछुड़ जाती है और मेघ के समान ही संताप के पर्वतों तथा हर्ष के मैदानों को पार करती हुई मृत्यु की शीतल वायु से जा मिलती है और फिर लौट जाती है, वहाँ, जहाँ से चली थी—प्रेम एवं सौंदर्य के सागर में—ईश्वर में।

: ६ :

एक मुस्कान, एक आँसू

सूर्य ने उन हरे-भरे बगीचों पर से अपने वस्त्र समेट लिये और दूर क्षितिज से उदय होकर चन्द्रमा ने अपनी शीतल चाँदनी सब ओर छिटका दी। मैं वहाँ एक पेड़ के नीचे बैठा साँझ के बदलते रंगों को देखने लगा। (वृक्ष की) टहनियों के पार मैंने छिटके सितारों को देखा, जो नीले रंग के गलीचे पर सिक्कों की तरह बिखरे हुए जान पड़ते थे और दूर घाटी में से आता झरनों का मधुर कलकल सुनता रहा।

जब पक्षियों ने पत्तियों से ढकी शाखाओं में अपने-आपको सुरक्षित कर लिया; पुष्पों ने अपनी आँखें मींच लीं और शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो गया तो मेरे कानों में घास पर पड़ती हलकी पदचाप सुनाई दी। मैं जो मुड़ा तो मैंने एक युवक और एक युवती को अपनी ओर आते हुए देखा। वे रुक गये और एक वृक्ष के तले बैठ गये।

युवक ने अपने चारों ओर देखा और तब कहा; "मेरे करीब बैठो, प्रिये, और ठीक से मेरे शब्दों को सुनो। मुस्काओ, क्योंकि तुम्हारी मुस्कान, हमारे सम्मुख जो कुछ भी है उसको प्रतीक है। प्रसन्न होओ, क्योंकि दिन भी हमारे हो

लिए प्रसन्न होते है। फिर भी मेरी आत्मा कहती है कि तुम्हारा हृदय आशंकाओं से भरा हुआ है, और जानती हो प्रेम-व्यवहार में शंका करना अपराध है।

"आने वाले दिनों में क्या तुम इन विशाल मैदानों की रानी बनना चाहोगी, जिसे चाँद की चन्द्रिका ज्योतिर्मय कर देती है और इस महल की महारानी बनना पसन्द करोगी जो महाराजाओं के राज्य-प्रासाद की भाँति है? मेरे सुन्दर घोड़े तुम्हें आनन्द-विलास के स्थानों पर ले जायेंगे और मेरे रथ तुम्हें मनोहर जगहों एवं नृत्यालयों में पहुँचा आयेंगे।

"मुस्काओ प्रेयसी! जैसे मेरे कोषों में सुवर्ण मुस्काता है। मेरी ओर देखो, जैसे मेरे पिता के अनमोल रत्न (मुझे) देखते रहते हैं। मेरी ओर ध्यान दो, मेरी प्रिये! क्योंकि मेरा हृदय केवल तुम्हारे सम्मुख अपने गुप्त रहस्यों को खोलना चाहता है। हमारे सामने आनन्द का एक वर्ष पड़ा है। एक वर्ष, जो हम स्वर्ण मुद्राओं के साथ नील (नदी) के महलों तथा लेबनान के देवदारों की छाँव में बिता आयेंगे। तुम राजाओं एवं प्रतिष्ठित पुरुषों की पुत्रियों से मिलोगी और वे लोग तुम्हारे वस्त्र एवं शृंगार से ईर्ष्या करेंगी। मै तुम्हें वह सभी कुछ दूँगा। क्या इस सबके लिए तुम्हारी कृपा-दृष्टि नहीं प्राप्त होगी? आह! तुम्हारी मुस्कान कितनी मधुर है! यही तो मेरे भाग्य की मुस्कान है!!"

कुछ समय पश्चात् वे लोग वहाँ से मन्द गति से अपने पैरों

तले सुकुमार पुष्पों को कुचलते हुए ऐसे चले मानो धनी के पैर निर्धन के हृदय को कुचलते जा रहे हैं। इस प्रकार वे मेरी आँखों से ओझल हो गये, और मैं प्रेम-व्यवहार में धन की स्थिति पर सोचता रह गया। मैंने धन के बारे में सोचा, जो मनुष्य की समस्त दुष्टताओं का आदि कारण है और (मैंने) प्रेम के बारे में सोचा, जो प्रकाश एवं हर्ष का स्रोत है।

मैं विचारों की दुनिया में भटकता रहा। तब एकाएक मेरी दृष्टि दो आकृतियों पर पड़ी, जो मेरे सामने से गुजर कर घास पर जम गईं। वे थे एक युवक और एक सुन्दरी, जो मैदान के बीच एक कोने में बसी किसानों की झोपड़ियों में से आये थे।

कुछ क्षण की चुप्पी के बाद, जो अखर-सी रही थी, मैंने आहों के साथ ये शब्द घायल ओठों से निकलते हुए सुने :

"अपने आँसुओं को पोंछ लो, मेरी प्रिये! क्योंकि प्रेम, जिसने हमारी आँखें खोल दीं और हमें अपना गुलाम बना लिया है, हमें धैर्य एवं सहनशीलता की बरकतें प्रदान करेगा। अपने आँसुओं को पोंछ डालो और धीरज धरो, क्योंकि हमने प्रेम की एक यादगार स्थापित कर ली है और उसी प्रेम के लिए हम निर्धनता की यातनाएँ, दुर्भाग्य कड़वाहट और विदाई का कष्ट सहेंगे।

"मैं समय से तबतक सन्तुष्ट नहीं होऊंगा, जबतक कि उसमें से ऐसा खजाना संचित न कर लूँ, जो तुम्हारे हाथों द्वारा ग्रहण करने योग्य हो। प्रेम, जो ईश्वर है, हमारी इन आहों और आँसुओं

की भेंट अवश्य ही स्वीकार करेगा, और उसके लिए हमें उचित प्रतिफल भी देगा। तो अब विदा दो मेरी प्रिये! क्योंकि अब मैं चलता हूँ, चन्द्रमा डूबने लगा है।"

तब मैंने एक कोमल आवाज़ सुनी, जिसमें कोई सिसकियाँ ले रहा था। एक अविवाहित सुन्दरी की आवाज़, जिसमें व्याप्त था प्रेम का दर्द, विरह-व्यथा एवं वह रहा था, धैर्य का मिठास!

"विदा प्रियतम!"

वे बिछुड़ गये, और न जाने कबतक मैं उस वृक्ष के नीचे ही बैठा रहा। दयालुता की उँगलियाँ मुझे खींच ले गईं और इस अद्भुत सृष्टि के रहस्यो ने मुझे खिन्न कर दिया।

उस समय मैंने प्रकृति की ओर देखा, जो गहरी निद्रा में लीन थी। तब मैंने सोचा तो एक ऐसी वस्तु को पाया जो स्वतन्त्र एवं अनन्त है। एक ऐसी वस्तु, जो स्वर्ण के बदले भी नहीं खरीदी जा सकती। मैंने एक ऐसी वस्तु को पा लिया जिस-पर शरद् के आँसुओं का कोई प्रभाव नहीं पड़ता और निर्धनता एवं कष्ट जिसे समाप्त नहीं कर सकते। एक ऐसी वस्तु, जो वसन्त में फूलती है और ग्रीष्म में फल देती है। वहाँ मैंने पाया 'प्रेम'!

: १० :

कवि की मृत्यु

रात्रि ने नगर पर अपने पंख फैला दिये और हिम ने उसे अपनी चादर में लपेट लिया। शीत के मारे लोग अपने-अपने घरों में जा छिपे। सी-सी करती पवन मकानों के बीच में से ऐसे चल रही थी मानो कब्रों के बीच कोई आदमी मृत लोगों के लिए विलाप कर रहा हो।

उस नगर की बाहरी सीमा पर एक पुराना मकान था। उसकी जीर्ण-शीर्ण दीवारों पर बर्फ का बोझ ऐसे पड़ा था मानो अब गिरीं अब गिरीं। उस मकान के एक कोने में एक अधटूटी खटिया पर फटा-पुराना बिछौना था, जिसपर एक मरणासन्न व्यक्ति लेटा हुआ दीपक की काँपती लौ को, जो अन्धकार से जूझ रही थी, अपलक देख रहा था। उसकी जवानी का अभी मधुमास ही था; परन्तु वह जानता था कि जीवन के बन्धनों से उसकी मुक्ति का अवसर निकट आ गया है। वह मृत्यु के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके पीले चेहरे पर आशा की ज्योति खेल रही थी और उसके अधरों पर एक दर्द-भरी मुस्कान थी।

वह एक कवि था, जो लोगों के हृदयों को अपने मनोहर गीतों से प्रसन्न करने के लिए आया था। पर अब वह धनिकों के इस

जीवलोक में भूख से तड़प-तड़प कर मर रहा था। एक सौम्य आत्मा, जो ईश्वर के वरदान-स्वरूप जीवन में माधुर्य उत्पन्न करने आई थी, इससे पहले कि मनुष्यता उसपर मुस्कराये, इस संसार से विदा ले रही थी।

वह अन्तिम साँस ले रहा था और उसके पास सिवा एक दीपक के, जो एकान्त जीवन में उसका साथी था और कुछ कागज के फटे-टूटे टुकड़ों के जिनपर उसकी विनम्र आत्मा के प्रतिबिम्ब थे, और कुछ न था।

मरणासन्न युवक ने अपनी नष्ट होती शक्ति को समेट लिया, अपनी भुजाओं को आकाश की ओर उठाया, और अपनी कुम्हलाती पलकें इस प्रकार हिलाईं मानो उसकी बुझती आँखें उस भग्न कुटिया की छत को तोड़ देंगी, ताकि वह बादलों से दूर सितारों को देख सके। तब उसने कहा :

"अब आ, ओ श्रेष्ठ कालात्मा, मेरी आत्मा तेरे लिए व्याकुल है। मेरे पास आ और (इन) सांसारिक बेड़ियों को ढीला कर दे, क्योंकि मैं इन्हें घसीटते-घसीटते थक गया हूँ। आ, ए मधुर मृत्यु, और मुझे इन मनुष्यों से दूर ले चल, जो मुझे अपने बीच एक अजनबी समझते हैं, क्योंकि मैंने देवताओं की वाणी मानव-भाषा में व्यक्त की थी। जल्दी कर, क्योंकि मनुष्यों ने मेरा तिरस्कार कर दिया और मुझे विस्मृति के गड्ढे में धकेल दिया है। इसलिए कि मैंने उनकी भाँति (दूसरे के) धन को ईर्ष्या से नहीं देखा और न ही उस (व्यक्ति) से अनुचित लाभ उठाया

जो मुझसे निर्बल था। पास आ, प्रिय मृत्यु! और मुझे (यहाँ से) ले चल, क्योंकि मेरी जाति के लोगों को अब मेरी आवश्यकता नहीं है। मुझे अपनी प्रेम-भरी छाती से लगा ले, मेरे ओठों को चूम ले, इन ओठों को जिन्होंने कभी माँ का चुम्बन न लिया। न बहन के कपोल छुए और न ही प्रेमिका के चुम्बन का अनुभव पाया। जल्दी आ और मेरा आलिंगन कर, मृत्यु, मेरी प्रिये।"

तब उस मरणासन्न युवक की शैया के पास एक स्त्री की मूर्ति आ खड़ी हुई, जिसका सौन्दर्य अपार्थिव था। वह हिम जैसे श्वेत वस्त्रों में वेष्टित थी और उसके हाथों में स्वर्ग के कमल-पुष्पों का एक मुकुट था।

उस (स्त्री) ने कवि के निकट आकर उसका आलिंगन किया और उसके नेत्रों को बन्द कर दिया ताकि वह आत्म-चक्षुओं से उसे निहार सके। उसके अधरों का उसने एक प्रेम-चुम्बन लिया, एक ऐसा चुम्बन जिसने उसके अधरों पर पूर्ण सन्तोष की एक मुस्कान बिखेर दी और उसी क्षण धरती और अन्धकारमय कोने में बिखरे हुए कुछ फटे-टूटे कागजों के अतिरिक्त वहाँ कुछ भी शेष न रहा।

सदियाँ बीत गईं और उस नगर के लोग अज्ञान एवं मूर्खता में ही पड़े रहे। जब वे महानिद्रा से जागे और उनके नेत्रों ने ज्ञान का सवेरा देखा तो उन्होंने नगर के बीच कवि की एक मूर्ति की स्थापना की। प्रत्येक वर्ष वे एक नियत समय पर वहाँ उसके सम्मान में एक पर्व मनाने लगे।

कितने मूर्ख हैं लोग!

: ११ :

खण्डहरों के बीच

सूर्यनगर को चन्द्रमा ने एक सुरम्य झीनी चादर से ढँक दिया और सम्पूर्ण जीव-जगत् में निस्तब्धता छा गई। भयावने खण्डहर महाकाय पिशाचों की भाँति उठ खड़े हुए। मानो रात्रि के (इस) दृश्य की खिल्ली उड़ा रहे हों।

इसी समय अस्तित्वहीन दो आकृतियाँ शून्य में से किसी झील की सतह पर के कोहरे की भाँति उभर आईं। वे एक संगमरमर के खम्भे पर बैठ गईं, जिसे काल ने उस अद्भुत भवन से ऐंठकर खींच लिया था और वे उस दृश्य को देखने लगीं, जो किसी समय के मनमोहक भवनों की याद दिला रहा था। कुछ क्षण पश्चात् उनमें से एक ने अपना सिर उठाया और एक ऐसी आवाज में, जो दूर घाटियो से प्रतिध्वनित होकर लौट-लौटकर आ रही थी, कहा !

"प्रियतमे ! ये उन समाधियों के खण्डहर हैं, जिन्हें मैंने तुम्हारे लिए बनवाया था। और वह हैं उस भवन के खँडहर, जो मैंने तुम्हारे मनोरंजन के लिए बनवाये थे। अब वे भूमिसात् हो गये हैं और अब वहाँ सिवा उस चिन्ह के, कुछ भी शेष नहीं रहा है जो संसार को उस शान-शौकत की कहानी सुना रहा है, जिसकी उन्नति के लिए मैंने अपना जीवन बिताया

था, और उस शक्ति को जिसके यश के लिए मैंने निर्बलों को काम पर लगाया था। अच्छी तरह देखो और सोचो प्रिये! तत्त्वों ने मेरे बनाये हुए इस नगर को नष्ट कर दिया और युगों ने मेरी (समस्त) बुद्धिमत्ता को समाप्त कर दिया तथा विस्मृति ने उस समस्त राज्य पर आधिपत्य जमा लिया, जिसकी मैंने नींव रक्खी थी। आह! उन प्रीति-कणों के सिवा कुछ भी तो बचा नहीं जिन्हें तुम्हारी सुषमा ने उभारा और वह सौन्दर्य जिसे तुम्हारी प्रीति जीवित कर पाई।

"मैंने यज्ञशाला में पूजा करने के निमित्त एक मन्दिर बनवाया। पुजारियों ने उसे शुद्ध किया, किन्तु आलस्य ने उसे मिट्टी में मिला दिया। तब मैंने मन मे प्रेम का मन्दिर बनाया और ईश्वर ने उसे पवित्र किया। इसे कोई अपमानित नहीं कर सकता। मैंने अपने दिन भौतिक तत्त्वों एवं वस्तुओं के जानने की खोज में बिता दिये और लोग बोले, 'व्यवहार की बातों मे यह कितना विद्वान् है।' और देवताओं ने कहा, 'कितनी थोड़ी बुद्धि का आदमी है यह!' तब मैंने तुम्हे देखा प्रिये, और प्रेम और आकांक्षा के गीत गाये। इसपर देवता प्रसन्न हो उठे, किन्तु जहाँ तक मनुष्यों का सम्बन्ध है उन्होंने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया।

"मेरे वैभव के दिन मेरी आत्मा एवं प्रवृत्ति के बीच एक दीवार के समान थे, जैसे दूसरे सभी जीवों मे होता है; और तुम्हें पा लेने के पश्चात् मेरे मानस में प्रेम उमड़ आया। उसने

(इस)दीवार को ढहा दिया। तब मुझे उन दिनों पर दुःख हुआ जो निराशा की लहरों के अधीन होकर बीते थे और जब मैं यह सोचता था कि सूर्य के नीचे सभी कुछ निरर्थक है। मैं अपना कवच धारण करता था और अपनी ढाल सँभालता था तो (मेरे) गिरोह के लोग मुझसे भय खाते थे, और जब प्रेम ने मुझे जगाया तो मैं अपनों के सम्मुख विनीत बन गया। पर जब मृत्यु आई तो उसने जालीदार एवं मिट्टी के वस्त्र को उतार फेंका और मेरा प्रेम ईश्वर-परक बन गया।"

कुछ देर की खामोशी के बाद दूसरी आकृति बोली, "जैसे पुष्प मिट्टी में से सुगन्धि एवं जीवन प्राप्त करता है ठीक उसी प्रकार आत्मा भूततत्त्वों की निर्बलता एवं दोषों में से ज्ञान एवं शक्ति को निचोड़ लेती है।"

तत्पश्चात् दोनों आकृतियाँ एक-दूसरे में घुल-मिलकर एक बन गईं और चल पड़ीं।

कुछ समय पश्चात् वायु ने उन खँडहरों में आवाज दी, "अनन्त (ईश्वर) प्रेम के अतिरिक्त (अपने में) कुछ भी नहीं रखता, क्योंकि मात्र यही उसकी अपनी पसन्द है!"

